विचित्रोपदेश।

भड़ौआसंग्रह।

(चतुर्थ खण्ड)

नीति और उपदेश विषयक दोहा, कवित्त, सवैया, और छप्पै, आदि छन्दों, का मनोहर संग्रह।

डुमराँव निवासी नकछेदी तिवारी उपनाम अजान कवि द्वारा संगृहीत और जगदीशपुरनिवासी वैश्यवंशावतंस श्रीमान् जागेश्वरप्रसाद और वेणीमाधवप्रसाद जी द्वारा प्रकाशित।

एकवार पढ़िये, सौ बार सराहिये, फ़र्क़ पड़े दाम फेर लीजिये।

॥ काशी ॥

भारतजीवन यन्त्रालय में मुद्रित हुआ।

सन् १९०७ ई०।

भूमिका।

इस पुस्तक (तृतीय भाग) के पुनरपि प्रकाशित करने का अवसर आज चौदह वर्ष के उपरान्त प्राप्त हुआ है। प्रथम से इस बार ४८ पृष्ठ पुस्तक बढ़गई है। इस आवृत्ति में यशवन्त यशोभूषण, चित्रकलाधर, जीवनी खान खाना, जीवनी प्रथम यशवन्त सिंह, मूर्खशतक और दोहावली आदि ग्रन्थों से सहायता ली गई है।

२९ पेज १८२ अङ्क तक विषय लल्लूलाल कविकृत "माधव विलास" ग्रन्थका है जो छिन्न भिन्न एक ग्रामीण पुरुष के संग्रहीत ग्रन्थ से उद्धृत कर सं० १९४१ मे कविवचन सुधा पत्र में फिर सं० १९४७ में इस पुस्तक की प्रथमावृत्ति में प्रकाशित किया गया था। और साथही इन दोनों में सूचना भी दी गई थी कि पाठक महाशय इस विषय को पूर्ण करने तथा ग्रन्थ और ग्रन्थकर्ता का पता लगा लिखने की कृपा करें पर आज २१ वर्ष के अवसर में किसी ने भी ध्यान न दिया।

आज दिन भी इस द्वितीय आवृत्ति के छप जाने पर एक महाशय ने "माधवविलास" दिखाया जिससे निश्चय हुआ कि यह विषय उक्त ग्रन्थ का है। ऐसी दशा में मुझे

नौव्वाब खानखाना का यह बरवा पढ़ कर अपने कर्तव्य की तुलना करनी पड़ती है। "नयना मत रे रसना, निज-गुन लीन। कर तू पिय झिझकारे, अजगुत कौन" तात्पर्य्य यह कि जहां मेरे हाथ से सैकड़ों ग्रन्थ प्रकाशित हुए, अनेक ग्रन्थकारों का डूबता हुआ नाम प्रकट हुआ वहां पर दो आवृत्ति पुस्तक छप जाने पर लल्लूलाल कवि ऐसे प्रसिद्ध पुरुष का नाम भूमिका में प्रसंग लगा कर लिखना पड़ता है।

विचार अविचार, विद्या अविद्या, ऐक्यता अनैक्यता धनी दरिद्र, दाता सूम, पण्डित मूर्ख, सत्य असत्य, भला बुरा, इत्यादि तथा संसार में रहकर किसके साथ कैसा बर्ताव करना चाहिये, जगत में कैसे कैसे लोग हैं, कवि किस मरज़ की दवा हैं, बादशाहो, नौआबों और राजाओंने इन का कहांतक आदर किया है, क्या क्या दिया है, इस गए बीते समय में भी यह किस उच्च सिखर पर हैं, इस मृत्युलोक में कैसे कैसे दाता ज्ञाता सूरवां सत्यवादी धनी मानी लोग हो गए हैं इत्यादि विषयक कविता बड़े २ स्लाघनीय ग्रन्थों से जिनके एक एक बातों पर लाखों क्या करोरों रु० न्यौछावर किये गए हैं लेकर इस "विचित्रोपदेश" के चारों भागों में लिखी गई हैं। और इन्हीं उक्तोक्त कारणों से देश में इसका आदर भी हुआ है। इस पुस्तक की उत्तमता देखकर हिन्दोस्थान तथा अन्य देशवासियों ने इस प्रकार सम्मतियां भेजी हैं जिनको अलग एक पुस्तक तैयार करनी पड़ी है।

मैं कह सकता हूं कि जैसे मणि भूषण से, भूषण सुन्दर शरीर से, शरीर गुण से, गुण यश से उत्तरोत्तर शोभा पाता है वैसे ही यह पुस्तक परम प्रसिद्ध, विद्यास्वरूप, महानुभावों की सम्मतियों द्वारा शोभित तथा आदरणीय हुई है। यह "सम्मतिमाला" चारों भागों का प्रतिबिम्ब है जिसके देखने से सहज में इनके पूर्ण आशय विषय दृष्टिगोचर हो जाते हैं।

६४ पृष्ठ से ७५ पृष्ठ तक टिप्पणियाँ भी दी गई हैं जिन से प्रकट होता है कि लच्छ दान देनेवाले तथा लेनेवाले आज दिन भी वर्तमान हैं और इसी से छ करोड़ छत्तीस लाख इत्यादि का देना लेना सत्य प्रतीत होता है।

सम्मति दाताओं ने "भड़ौआ" नाम विशेष पर तर्क किया है और मैंने भी कि इस आवृत्ति के छपने के प्रथम केवल "विचित्रोपदेश" नाम रखने का प्रबन्ध किया था, पर विशेष कारणों से सफलता नहीं प्राप्त हुई। इसके विषय में जिन्हें विशेष आग्रह होवे, मेरे पास स्वतन्त्र पत्र लिख कर जानने की इच्छा करें।

"वीरोल्लास" की भांति बहुत सी प्रस्ताविक तथा ऐतिहासिक कविता दी गई है जिनकी विशेष इतिवृत्ति स्थानाभाव के कारण इस में न देकर पूर्णरूप से "कविकीर्त्ति कलानिधि" में लिखी गई है। "सम्मति माला" के रचयिता प्रचण्ड

लेखक महाशयों का नाम ग्रन्यान्त में लगा है जिन के देखने से प्रकट हो सक्ता है कि यह माला कैसी होगी।

इस संग्रह में मुन्सिफ देवीप्रसाद, कवि राजा मुरारिदान मजिष्ट्रेट जोधपुर, स्याम सेवक कवि अध्यापक मऊगञ्ज रीवां और शिवप्रसाद कवि दरभङ्गा आदि से सहायता मिली है अतएव उक्त महाशयों को धन्यवाद दिया जाता है।

आशा है कि इसी प्रकार और महाशय भी धन्यवाद के भागी होने की इच्छा करेंगे।

नकछेदी तिवारी
डुमराँव राज
जिला आरा।



कवि-नामावली ।



(१) अजानकवि संग्रहकर्त्ता—डुमराँव ।

(२) ग्वालकवि बन्दीजन—मथुरा ।

(३) घाघकवि ब्राह्मण—अन्तर्वेद ।

(४) तुलसीदास—गोस्वामी तुलसीदास रामायणवाले राजापुर—प्रयाग ।

(५) देवीदास बन्दीजन—अन्तर्वेद ।

(६) नवनीत कवि माथुर चौबे—मथुरा ।

(७) प्रधान कवि—रामनाथ प्रधान वैश्य मन्त्री महाराज विश्वनाथसिंह देव बहादुर—रीवाँ ।

(८) प्रवीनराय पातुर—ओड़छा बुन्देलखण्ड ।

(९) मीर—उर्दू शायर ।

(१०) ब्रजकवि—गोकुलप्रसाद कायस्थ बलरामपुर—सूबे अवध ।

(११) विजयभूप—महाराजा बलरामपुर ।

(१२) बेनीकवि—बन्दीजन बैंती—रायबरैली ।

(१३) बाँकीदास—चारन, कविराजा मुरारिदान के पितामह जोधपुर ।

(१४) मतिराम कवि—ब्राह्मणभूषण के भाई—टिकमापुर कानपुर ।

(१५) महिरावन, राजकुमार—राजकोट गुजरात ।

(१६) मुरारि कवि—कवि राजा मुरारिदान—जोधपुर ।

(१७) मंचित कवि—बख्शी महाराजा पन्ना ।

(१८) रघु कवि ।

(१९) राजसी—महाराणा राजसिंह बाहादुर—उदयपुर मेवाड़ ।

(२०) रहीम—अब्दुलरहीमखाँ नौव्वाब खानखाना ।

(२१) शिवप्रसाद कवि बन्दीजन रामनगर बनारस दर्बार कवि दर्भङ्गा ।

(२२) शिवराम कवि, बन्दीजन,—असनी जिला फतहपुर ।

(२३) सूर्य्यमल्ल चारन—बून्दी राजपुताना ।

(२४) स्यामसेवक—सनाढ्य ब्राह्मण अध्यापक—मऊगञ्ज रीवाँ ।



विषय सूची ।

सम्मतिमाला।

यह एक प्रकार "विचित्रोपदेश" (भड़ौआसंग्रह) का प्रभावशाली माहात्म्य है जिसको इंगलेण्ड तथा हिन्दोस्थान के बड़े २ विद्यास्वरूप, सत्यवक्ता, परम श्रद्धास्पद, धनी-मानी पुरुषों, समाचारपत्रों और सभाओं ने अपने इच्छा-नुरूप लिखा है। एक वस्तु के मैदान में अनेक कुशल पुरुषों के विद्याविचार रूपी घोड़े किस वेग से अपनी विलक्षण गति दिखलाते हैं इस बात को देखने के लिये पाठक अ-वश्य इच्छा करेंगे। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि विना इस माला के भ० सं० का गौरव और आशय जानना तथा स्वाद पाना विना नमक का भोजन है। अब मैं उन महा-नुभावों का नाम धाम लिखता हूं जिनके परम रोचक गद्य पद्य मय लेखों से यह पुस्तक संग्रह हुई है। (१) राजा जय-पृथ्वीबहादुर रजीडण्ट कलकत्ता गवर्नमेण्ट नेपाल, (२) राजा कमलानन्दसिंह श्रीनगर, (३) महाराजा मानसिंह बहादुर के भतीजे राजा लक्ष्मीनाथसिंह अयोध्या, (४) महा-महोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी (ज्योतिषी) गवर्नमेण्ट कालेज बनारस, (५) बा० जगन्नाथदास (रत्नाकर) बनारस, (६) बा० देवकीनन्दन (चन्द्रकान्ताकार) बनारस, (७) पं०

श्रीकिशोरीलाल गोस्वामी बनारस, (८) पं० वामनाचार्य्य मिर्जापुर, (९) पं० ज्वालाप्रसाद मुरादाबाद, (१०) पं० बलदेवप्रसादमिश्र मुरादाबाद, (११) पं० श्रीराधाचरणजी गोस्वामी बृन्दावन, (१२) बा० जगन्नाथप्रसाद खंडवा, (१३) कविराजा मुरारीदानजी जोधपुर, (१४) पं० गंगासहायजी दीवानबूंदी, (१५) भगवन्तकवि प्रतापगढ़, (१६) लछिरामकवि राज अजोध्या, (१७) भारतमित्र पत्र और (१८) हिन्दी बंगवासीपत्र कलकत्ता, (१९) हिन्दोस्थानपत्र कालाकांकर, (२०) वेंकटेश्वर पत्र बंबई । इसके अतिरिक्त मि० जी० ए० ग्रियर्सन साहब बहादुर चेम्बर्ली लंडन आदि कई योग्य पुरुषों के ५० लेख हैं ।

भारतजीवन प्रेस बनारस सिटी ।



विचित्रोपदेश ।

(भड़ौआ संग्रह)

तृतीय खण्ड ।

सोरठा ।

बंदि सुघर ब्रजचन्द, यह अजान संग्रह करत ।
विमल होय मतिमन्द, जाके निरखतहीं तुरत ॥ १॥

मनुष्य परिचय—कबित्त ।

संगति सुभाव ज्ञान गांव को बिचार करि, उद्यम सहाय सुनि देखि उर आनिये । जानि कै कुलच्छन सुलच्छन सकल विधि, नैंनन मैं रूप देखि बैन पुनि छानिये ॥ मोल ताल माप थिर भारी है परिच्छा जाकी, सहसा कसौटी परे काज के प्रमानिये । कीमत अपार तेज बुद्धि के प्रकार तामै, नर से अमोल नग ऐसे पहिचानिये ॥ २ ॥

सुन रे सयाने ह्वै कै काहू को न दीजे सीख, पहिले विवेक आप आपनो बिचारिये । जाको है सुभाव जैसो ताहीको रहत तैसो पाथर न भीजे पानी कब लों पखारिये ॥ जहां बकवाद तहां अन्त न सवाद कहूं, आपै जो न सुधरै तो कौन को सुधारिये । जो है अति जोर तौ बताऊं एक ठौर तोहि, जीतिये जगत जोपै एक मन मारिये ॥ ३ ॥

दो०—सब लच्छण पहिले सुनहु पुनि सत-संगति पाय।
मन चंचलतासों मिटै नीच न संग सुहाय ॥ ४ ॥

राजा—छप्पै।

पुन्यसील जनपाल न्याव प्रति पच्छ न कोई।
कर सौंपि अधिकार आप सम जानै सोई ॥
रस भाषा रणनिपुन शत्रु उर में नित सालै।
जो जेहि लायक होय ताहि तैसो बिधि पालै ॥
सुखकरन भयद सागर सरस रत्नग्राह लीने रहै।
लच्छण अनंत महिपाल के बुधि प्रमान कवि रघु कहै ॥ ५ ॥

प्रधान—दोहा।

धरा धेनु भूपति धनी दुहनिहार बिचदार।
रैयत बच्छ विचारिये बहुर सुनौ बिस्तार ॥ ६ ॥
दूध दोहनो राखि कै करै स्वामि को काज।
सद प्रधान ताको कहैं जाहि राज की लाज ॥ ७ ॥

क०—करै आवदान सदा कागद में सावधान, सभै सम जान दृष्टि राखै सब ठौर है। नाहि न डिगत जोपै जगत डिगाय देत, स्वामी के सुधार पर जाको एक दौर है ॥ ज्यों ज्यों गरुवात त्यों नवात ज्यों कलपतरु, करत बिचार ज्यों सकल सिरमौर है। भीर परे करत निवाह ज्यों गयंद रद खाइवे को और औ दिखाइवे को और है ॥ ८ ॥

गाफिल—दोहा।

कहूं दूध कहुं दोहनो कहूं बच्छ कहुं गाय।
कहूं आप सोवत रहै कहूं और पो जाय॥ ९॥

क०—उज्जल तें उज्जलहो देखत सकल विधि जाहिर न कछु दूध छांछ को परतु है। आनि के लबार एक बात को अपार कहै, ताको सब सांचो मानि मनमें धरतु है॥ और कोउ आनि के सयानप की बात कहै, भ्रम उपजाय सब एकहो करतु है। हानि बुद्धि आपनो न आपही तें जानै सु तो पोसति है आंधो मुख कूकर भरतु है॥ १०॥

बादल चढ़ा—कवित्त।

जोहो कर आयो ताहि कितहु उड़ायो मजा, बासिल न पायो नहीं चौकस रहत हैं। सूधे को न करे साथ थोरे को न घाले हाथ, व्योम को भरत बाथ ऐसे ही रहत हैं। जहां नहीं पाय तहां सीस धुनि पछताय सबसों खिजत अति अन्तर चहत हैं। मन में न डरै मुख मोठो मीठी बातें करै बादरचढ़ैया भैया तिनको कहत हैं॥ ११॥

हरासो—कवित्त।

बातनि बनाय जमा बासिल मिलाय सबै ऐसे समुझावै न कसर कहूं राई की। साहिब के पीछे नहीं जानै कछु साहिब हैं आवै मुख गावै कान राखत न भाई को। पाप के पखान तो पचावै नीच पेटन मैं बोलन में सूधे कहूं बात

न ठगाई की । साधुन को दुख देत लौंड़ो सिर पाप लेत साधे निज काज नहीं लाज ठकुराई की ॥ १२ ॥

रिश्वती—दोहा ।

झूठे बोलें जन्म भर करत आपनो काम ।
एकै पैसा सूकि ले पांच बिगारें दाम ॥ १३ ॥

क०—झूठही को तानो अरु बानो पुनि झूठही को झूठे सिर पाव में न धागा एक सांच को । झूठई करत कौल बोल पुनि झूठे सबै रैयत डरत ऐसे जैसे फर आंच को ॥ करै बदगोई फेर ढूंढ़त खरोई रहै कहै कालिह कोनि देखी आज सांच माच को । साहिब के सुनिवे तें सदाई निसङ्क रहै सूकी लेइ पैसा पै बिगार करै पांच को ॥ १४ ॥

झूठा कामदार—दोहा ।

लाख गये की खबर नहिं कौड़ी पै जिय देत ।
चोर साहु बूझै नहीं आठो जाम अचेत ॥ १५ ॥

क०—लाखन बिगरि जात लेत ना खबर कोऊ कौड़ी कौड़ी लागि सब काहू सों लरत है । देत ना जवाब अन बोल्योई रहतु आप एको ना अरथ सरकार को सरतु है ॥ काहू नहिं पहचानै रैयत न सङ्का मानै कूकर सो जाय जहां कूदोई परतु है । कौन सो करै पुकार आंधरे लूट्यो बजार झूठ्यो कामदार कामदारी यों करतु है ॥ १६ ॥

कचहरी का कूकर—दोहा।

अर्थ सरै जहँ आपनो विधि सों कहै बनाय।

कर जो कछु लागै न तौ लागै उर मैं लाय ॥ १७ ॥

क०—कोई कछु देत ताको काम को उठाय लेत नाहिन जो देत तो रिसाय रहै गैरो के। उलटो को सुलटो बनाय कहै नीको विधि सुलटो सों उलटो करत काम बैरो के ॥ डारिये सो खाय बांयें दाहिने नवत आय पूंछरी हलाय मिलै कूकर कचैरी के। बाजे नेकबख़्त लेके पैसै पहुंचाय देत पोर लै मलीदा ज्यों करत काम खैरी के ॥ १८ ॥

अनभिज्ञ प्रधान—दोहा।

सामिल हो सब काज मैं बिन बूझे कह बात।

यों अनभिज्ञ प्रधान के लक्षण सबै जनात ॥ १९ ॥

छ०—करत कहे बिन काज बात अनबूझे बोले।
सब कों चोकस करत जहां विधि तहां न तोलें ॥
सिमिटि लेत नहिं बोझ बहुत स्यानप बिस्तारे।
कैसे बिगरत कहूं हाथ जो होय हमारे ॥
मूरख सुजान गुनि के मिलै जे निज गुन जानै नहीं।
अनभिज्ञ प्रधान बखानहीं जाको मति अति है सही ॥२०॥

सभा चतुर—

निकसत जिते प्रसंग सबै नीके समुझावैं।
बहुत भांति दृष्टान्त बहुरि इतिहास सुनावैं ॥

समुझै भाषा सकल फेरि नवरस को जानैं ।
नर के जिते सुभाव सबै नोके पहिचानै ॥
नृप आदि सुनौ उमराव सब राजो पुनि सेवक रहैं ।
विधि सकल लोक व्यवहारवित् सभाचतुर ताको कहैं ॥

दो०—बेद पुरान कुरान सब सोई बात कहात ।
बात कहत आवत सु तो करामात है बात ॥ २२ ॥

क० - बातही कहे तें नाथ गोरख से सिद्ध भए, बातही कहे ते पोर अब लों पुजात है । बातही कहे ते बेद व्यास जू प्रसिद्ध भए, साह साहजादे मिले बातही कहात है । बातही कहे ते विष बासुकि उतरि जाय जाने बिन बात मूढ़ कैतो दुख पात है । पारसी पुरान मन्त्र वेदहू कतेक बात बात कहि आवै ताहि बात करामात है ॥ २३ ॥

सभा बिगार—दोहा ।

सबसों भाखैं चरपरे खारे सबै सुभाय ।
रूखे सूखे रस रहित मुंह लागे दुखदाय ॥ २४ ॥

छ०—बनत होय जहं बात वाहि मिलि के भरमावैं ।
विधि सों कहे बनाय तबहिं ताको उचटावैं ॥
दीन होय दिलगीर कहे सुन सोख हमारी ।
भ्राता किय विस्वास दगा खैहो तुम भारो ।
इमि इते आनि ऐसो कहैं, मन को भेद मिलै नहीं ।
लच्छण सब सभा बिगार के, इहि विधि जन जानें सही ॥

हँसतचार—दोहा।

बरछी बान बदूक लौं हैं इनके आधार।
हँसत चार के बचन हैं करत करेजे पार ॥ २६ ॥

क०—रात दिन देखतहीं रहैं जे पराये छिद्र, सूझत न आपने जे परबत देह मैं। बातन कहत मुसुकात चितै सबै तन जाहिर जनात पुनि बोलत सलेस मैं ॥ चारोहीं दिसा तें नित चौकत रहत चित, स्वान चूक खान ज्यों बिचारत अंदेस में। कुमति कुतर्क ते न अन्तर बिचारै कछू, हांसी में कहत रोसो कहैं न कलेस में ॥ २७ ॥

त्रिविधि श्रोता—दोहा।

सुनत बात अति बुद्धि कर सो उर माहँ रहात।
एक कंठ पर जरति है इक अति कर बिख्यात ॥ २८ ॥

क०—एक तो सुनत बात बुद्धि के सयानप सो, स्वाती जल सीप जैसे अन्तर धरतु है। ताही तन त्याग के तकत मर जीवो तोऊ पावत न पार जो पै सिंधु में परतु है। एक के सुनत कान कंठ में रहति आनि नाहिन करतु जी लौं अन्तर जरतु है। एक सुनि अंस ठौर ठौर लै प्रकास करै मानो दीपमालिका को दीप ज्यों बरतु है ॥ २९ ॥

मुनसी—दोहा।

लखि प्रताप जैसो लिखत लिखन पढ़न गुन पूर।
सुनत एक उपजत बहुत सो मुनसो मति-रूर ॥ ३० ॥

क०—जैसो मन साहिब को वैसो मन लखे आप, जाने परताप जैसो कागद में लेखिये । आखर समान सम सरखे सरल सांचे, भाषा हिंदुस्थान तुरकान में विशेखिये । एकहो सवाल पर ज्वाब अति सूझे जाहि कहै समुझाय बात नीके अवरेखिये । ऐसो विधि पढ़ेमानो पहिलेई पढ़ि राख्यो, मुनसी कहावे जामे एते गुण पेखिये ॥ २१ ॥

उग्रदाता—दोहा ।

अति बलभा जो आपनी तृण ज्यों तजत न बार ॥
कह संपति कह बिपति में वही उग्र दातार ॥ २२ ॥

क०—करन दान निज कवच सीस जगदेव समर्प्पिय । पर दुख विक्रय पाय सकल निज देह समर्प्पिय ॥ दोनौ तन सु दधीच बज्र लै ताहि बनायो । दुख देख्यो हरिचन्द सत्य नित बढ़त सवायो । यहि भांति उग्र दातार सुनु सर्व त्याग कीनो सही । परभात नाम रघुराम पढ़ कलि जिन की कीरति रही ॥ २३ ॥

विवेकी दाता – दोहा ।

जैसो सम्पति आपनी तैसोई तहँ दान ।
ताहि विवेकी कहत हैं बहुत करत सनमान ॥ २४ ॥

क०—जहां जैसो रीझ तहां तैसोई बिचार देत, गांव गज घोड़ा सिरो पाव सब पावे हैं । त्याग तरवार में कमान जाकी एक ठौर, देख व्यवहार सुख पावत जो आवैं

हैं। कीरति कहत जात देस देस कहै बात, जैसो अनुमान जाको तैसो गुन गावै है। बहत प्रबाह कर नाहिंन पखार लेत, औसर के बीते फिरि पाछे पछतावै हैं॥ ३५॥

लबार दाता—दोहा।

अल्प देतु अरु कहत अति ठौर ठौर बिस्तार।
ललचावत सब लोक को वह दातार लबार॥ ३६॥

कलि दाता—दोहा।

कहूं देत कुल रीति करि कहूं पञ्च की लार।
कहूं देत दुख पाय कै वह कलि को दातार॥ ३७॥

चौट दाता—दोहा।

पचतु आप मंगन पचतु बहुत लगावत बार।
देत दान अति सोच करि वहो चौट दातार॥ ३८॥

खब्बीस दाता—दोहा।

मन्त्र कवित मंगन पढ़त नेक न धुनसे सीस।
रहत सोच उर देन को सो दातार खबीस॥ ३९॥

सूम—दोहा।

देखत दाता मंगनहिं यों चितवत चहुंओर।
काक डरत सब सों रहत ज्यों कच्छप जल कोर॥४०॥

छ०—अनदेखे उठि जायँ देखि कै दीठि दुरावैं।
अनुचर सों खिज उठैं काज बिन काज बतावैं॥
मन सोचैं गहि मौन कवन ताके ढिग आवैं।
तजैं देह धन काज द्रव्य की बात सोहावैं॥

अति सुखी होंय स्वारथ सुनत ज्यों बिलाव मूषक कहैं।
निकरै प्रसंग दातार के तब तिन के औगुन कहैं ॥ ४१॥

लालची - दोहा ।

रूखे रुख सब सो रहै दोठि जहा जहँ दाम ।
करता ऐसे अधम सों कबहुं न पारै काम ॥ ४२ ॥
नोच ऊंच बूझै नहीं नगर नायका मित्त ।
सौंपें तन सब जगत कों जाकों प्यारो वित्त ॥ ४३ ॥

क० - चित्त चतुराई सों न लाजहु को काज कछू, इज्जत औ आदर में कहौ कहा पाइये। रहिये किलकिला ज्यों न्यारे सबही सों सदा, कोजै निज काज कहुं नैन न मिलाइये। गारी सो बयार सम हांसो औ न होत कछू, कीजे न सनेह कहूं काहू सों ठगाइये । गिरत परत पग धरत मरत पुनि, सौकी एक बात टका पैये तहां जाइये ॥

कवि उपदेश ।

क०—सूम के सदन जाय कीरति पढ़े बनाय, मन माझ मुरझाय समझै न बानो में। सेवक बुलाय कहे इन को बिदा कराय, हाथनि हमारे कछू जाय लेहौं दानी में ॥ आदर न पैये तहां कबहूं न जैये जोऊ लाखनिहूं पैये पै न रहिये अयानो में । नर के बखान करै तोऊ न अरथ सरै ऐसो कविताई को बहाय दोजे पानी में ॥ ४५ ॥

सूर—दोहा।

बड़े बोल बोलें नहीं भाखत कहूं न दौन।
रनबांके सूधे सदा मरन तिनूका कौन ॥ ४६ ॥

क०—आपनो बड़ाई कहूं मुखतें न करैं आप, दीनता न भाखें कहूं वैठि के सुमन में। काल किन होय पै मुरैं न रन मांझ तासो, मरन तिनूका सम जाने सदा मन में॥ जेते सुख भोग तेते भोगते सबहि पै न, लीन उन मांझ रहै बीजुरी ज्यों घन में। लछून कहै जे सूर दाता औ सयाने सदा सूधे सबहीं तें सदा वाके रहैं रन में॥ ४७॥

कायर दोहा।

बजैं जुझाऊ बाजने तब छाती धरकाय।
पग आगे पाछे परै औ सुधि बुधि उड़ि जाय॥ ४८॥

क०—जूझबे को जाय ताके दौरत है आगे आय, मूछैं सुरराय बातें करबे को करै है। मुजरौ हमारो आज काम आवै बार बार मुख सो करैं अवाज तन मांझ डरैं हैं। फौज जब देखैं तब पाछे जाय परें पाय, छाती धरकायबे को यही चित धरे हैं। ऐसे कहि आये घर नेक जिन राखो डर, बौरे लर मरें पै सयाने कहुँ लरै हैं?॥ ४९॥

मुतफ़न्नी—दोहा।

जिहि विधि कारज होत जहँ वैसे करत उपाय।
इत्यादिक लच्छण अधिक सो मुतफन्द कहाय॥ ५०॥

शहरी मित्र—दोहा।

आसन बहुत बनाय कै खात परायो वित्त।
मिलते मन मिलवैं नहीं वे कह सहरी मित्त॥ ५२॥

क० – आप जहां जायँ तहां असन अपार करैं, मिलैं कहूं राह में तौ दीठ न मिलावैंगे। जैये घर वाके मनो सोग परी ताके कहो, आये यहां काके कछू सौदा लये धावैंगे ॥ मेरो पुनि एक बड़ो काम है जवार मांझ, चलिये अपुनि जाय फेर घर आवैंगे । करि मनुहारि वाहि उलटोई सकुचाय, पावत न पार ए दरस कब पावैंगे ॥ ५२ ॥

कसबाती—दोहा ।

हिय करि मिलैं न काहु सों अति हित ऊपर आन ।
मन कायर मुतफन्द मुख सो कसबाती जान ॥ ५३ ॥

क०—बूझे बिन बात कहै चोटो करि लैनों चहै, रयत को जाय दहै आमिज ज्यौं आए हैं। लोगनि बुलाय कहैं हमैं क्यों न मिलो आय, साहिब रिसाय हमैं तुम पै पठाए हैं ॥ उनको डराय जोहो पावत सो लूटि खाँय, फिरि मिलि जांय मानो उनहीं के जाए है। फूलि बतलाय कुंभिलाय रन माझ आए फाटति है छाती कसबाती यों कहाये है ॥ ५४ ॥

धीर—दोहा ।

करि बिचार कारज करन धीर कहावैं सोय ।
यामें लोक न दोष है होनी होय सो होय ॥ ५५ ॥

छ०—राज तेज धीरज्ज मन्त्रि धीरज मन्त्री बिधि ।
रन धीरज रजपूत बिप्र धीरज विद्या बिधि ॥
साहु धीर बाणिज्य शील धीरज जोगिश्वर ।
तिय धीरज गृहकाज बाज धीरज जु जुद्ध पर ॥

मृग आदि भागि जीवहिँ सदा तहँ धीरज कारन कवन।
थानक प्रधान कवि रघु कहैं मूरख बड़ धीरज भवन ॥५६

अधीर—दोहा।

भ्रमत रहै तन भ्रमर ज्यों सुनि समुझै नहिँ बात।
सकल काज सहसा करै छन आवत छन जात ॥ ५७ ॥

क०—एक एक छन में कहत बात औरै और, चंचल अधिक चित्त ताहि न विचार है। बोलत न बोले बिन बोलेही बकत रहै, पीपर को पात किधौं रसना प्रचार है। ठौर ठौर फिरत लरत कहै आक बाक, नाहिन बिश्वास करै मिलत न बार है। आपनो परायो कोऊ कहै तब जानतु है नर है अधीर ताको ऐसो अधिकार है ॥ ५८ ॥

लराँक—दोहा।

निस दिन लरत उपाय करि कछु कहि गारो देत।
लरत फिरत बिन काजहीं है लराँक बिन हेत ॥

क०—जबहीं लरत कहुं तबहीं तृपित होत, जो न मिलै कोऊ तब भूर सो लरत हैं। जहां जहां जाय तहां तहां लै उपाधि उठै, तन तन लागे बिन आगही जरत है। कोऊ बात कहै ताको बीचही बिगारि देत, एतै पर बोलै तहां टूटही परत है। ऐसे नर होंय तहां और न उपाय कछु, आप जो न बोलिए तौ आपही दरत हैं ॥ ६० ॥

स्वान मस्तक—दोहा।

रात दिवस भूकत रहै सुनै न हित की बात।
बहै स्वान मस्तक सुनौ नेक न सीस पिरात॥

स्वानहृदय—दोहा।

बिसरि जात छन एक में छन में भूक अपार।
पूंछ हिलावै लोभ बश लरत मिलत नहिं बार॥

छ०—बिन बूझे बकि उठै बात काउ मर्म न पावैं।
अनत सुने जो होय ताहि फिरि फिरि मुंह ल्यावैं॥
कह बुझाय कोउ बात ताहि सुनि कै चुप साधे।
अगनित औगुन कहै तबहिं फिरि ताहि अराधे॥
गुन एक बड़ो यामें बसै मन याके ग्रन्थी नहीं।
यह स्वान हृदय खल के सुनहु ए लच्छण जिनके सही॥६३

बे, दियानत—दोहा।

नैन नीच वह नीच बिन, नहिं इमान चलि चित्त।
जैसे स्वान सराँय को, कहौ कौन को मित्त॥ ६४॥

कोतवाल—दोहा।

सर तरु नर घर घर सकल, पल पल जाहि प्रकास।
निसि जगान अरु न्याय में, नाहिन होत उदास॥६५॥

कवित्त। राखे निस वासर निगाह सब ठोरन की सुनि के बिचारि सब न्याव कर छानै है। जहां लों खबरि नर नारि की सकल जाहि साहु अरु चोर सबहो को पहिचानै

है । पच्छ न करत कहूं आपनो परायो होय न्याव पै नजर और चित्त में न आनै है । साधे सुद्ध राह बटराह सब दूर करै ऐसो जाको चाल कोतवाल सो बखानै है ॥ ६६ ॥

चुगुल दोहा ।

उलटो को सुलटो करै सुलटो को उलटाय ।
बुरो करत सब जगत को वो नर चुगुल कहाय ॥ ६७ ॥

सवैया । सांच को झूठरु झूठ को सांच इतै को उतै उत को इत लावैं । चालत है घर लोगन को फिरि न्यारे के न्यारे नजीक न आवैं । जाहि सों ताहि सों जाय मिलै बहु लैके कलंक कलंक लगावै । नीच करैं छित लोचहि सों परछिद्र सुनै तहँ चित्त नचावैं ॥ ६८ ॥

चोर—दोहा ।

करन काज मन में कहै मत कोन देखै आन ।
दुनिया बिच अरु दोन बिन तें सब चोरहि जान ॥ ॥६९ ॥
सदा डरत जे सांच सों [illegible] झूठ [illegible] जोर ।
चित्त बिरानो बस्तु में तिन को कहिये चोर ॥ ७० ॥

ठग— दोहा ।

जो दरसन जहँ मानिये सोई स्वांग बनाय ।
सिद्ध साधु ह्वै जात है सब [illegible] ॥ ७१ ॥
ठगविद्या नारीचरित [illegible] ।
जाति जनावन ग्रंथ में [illegible] ॥ ७२ ॥

धूर्त—सोरठा।

मिलै ताहि भरमाय, ऐसो विधि अपनाय लै।
जो तन जाय तु जाय, कह्यो न मानै और को॥ ७३॥

क०—पहलेई हित पाय मोम ह्वै के मिलै जाय, पाछे महिमा बढाय आप को बखाने हैं। देखे सब देस तब हुते हम बाल बेस अब जासों बात करैं ऐसो को सयाने हैं॥ मारैं सब घात पात करैं वैरिन को तुम सों कहत पै जगत माहिँ छाने हैं। जोग अरु भोग तौ हमारे दोऊ हाथन में इष्ट के प्रताप कोऊ देव पुनि आने हैं॥ ७४॥

धर्म ठग—दोहा।

मंत्र तंत्र औषध करै सबै ठौर मिलि जाय।
सब विधि होत सुलच्छणो वैठे सर्वस खाय॥ ७५॥
लिये कपट सबसों मिलै अधिक बात रस आन।
सबही सों हित करि मिलै ताहि धर्म ठग जान॥७६॥

क०—ऊपर तौ वेष अति सुन्दर बनावत हैं भीतर तौ सौस लौ सिंगार रस भरे हैं। जप तप ध्यान पूजा करत दिखायबे को चाहत बड़ाई डर राम सों न डरे हैं॥ आप को न बोध सब जगत प्रबोधत हैं भाखे परमारथ को स्वारथ में परे हैं। इनसों जो मिलैं ते टले हैं सांचे मारग सों तिनको प्रणाम कवि रघुराय करे हैं॥ ७७॥

परोपकारी—दोहा ।

देखत नैन अमी भरे हिय परमारथ हेत ।
तिनको जीवन धन्य है सबही कों सुख देत ॥ ७८ ॥

क० । अम्ब से कलप तरु पाथर सों मारियत देत हैं सुफल उर औगुन न आने हैं । उदर धरा को फारि नीर कों निकासत हैं जग कों जिवावत पै ममता न माने हैं ॥ केतो दुःख सहत कपास निज काज बिन ढँकन कहाय लाज राखत जहाने हैं। कनक पराये काज ताड़न दहन सहै ऐसे उपकारी दुखही को सुख जाने हैं ॥ ७९ ॥

गुप्त दुष्ट—दोहा ।

अति सुबेष मीठे बचन अन्तर होत कठोर ।
ते नर कबहुं न आपने गुप्त दुष्ट हैं घोर ॥ ८० ॥

क० । साह ज्यों बनाय बात सब सों सुनाय कहै आपनी कलंक न कलंक कहूं खामी है । पायन पसारैं जाल कर सों जपत माल अतिही बजावै गाल देत बदनामी हैं ॥ साहिब के आगे तौ सयानप के सागर हैं मधुर उदास बोलैं मानो निहकामी हैं । देखत कलापी पापी सांप से पचावत हैं मुख के तो मीठे अरु अन्तर हरामी हैं ॥ ८१ ॥

प्रगट दुष्ट—दोहा ।

पर धन पै कुब्भज प्रगट बिकल देखि पर बाम ।
पियरे सतमारग सुनत हुलसत देखि हराम ॥ ८२ ॥

क० । लाख सौंह खात पर सांच को न लेस कहूं कारको करद केते कण्ठ धरियत हैं । करत बिश्वासघात नाहिन बिश्वास करैं ताही सो बिगार जो न फन्द में परतु हैं ॥ सीस काटि धरिये तो हँसि के भड़ाल कहैं सांच के कहे ते खुनसाय के लरतु हैं । ईसह्न दहत उर अन्तर अ-नन्त देखि करते किये को सोच करता करतु हैं ॥ ८३ ॥

महादुष्ट—दोहा।

पर दुख देखत परम सुख पर सुख है अति हान।
निलज कृतघ्नी लालची ताहिं दुष्ट करि जान ॥

क० । जैसे पृथुराज पर काज के जहाज भए तैसे पर दोष सुनिबे को सत कान हैं । कहत बड़ाई प्रभुताई की सहस फणि ऐसी बिधि औगुन निकाई के सुजान हैं ॥ सुख पर मिलैं आय पीछे बुरी कहैं जाय कीर्जे गुण मेटन को राम कैसे बान हैं । गज को अवाज सुनि आए ज्यों गरुड़ छाड़ि तैसे परनिन्दा सुनिबे को सावधान हैं ॥ ८४ ॥

दगाबाज—दोहा।

सौंह करत इतबार को हित करि के फिरि खाय।
बाहर लघु अन्तर बड़ो दगाबाज सु कहाय ॥

छ० । सहस सौंह नित करैं सहस इतबार बढ़ावैं।
मिलत बहुत लघु होय बहुरि उर में न समावैं॥
बोलत सकल सयान कहत सेवक ज्यों चालें।
जाको बेठें डार मूल ताही को घालें।

वह समय पाय उलटैं सहो उर विश्वास न आनिए।
याही प्रकार समझो सकल कपटी पुरुष बखानिए॥८६॥

चलांक – दोहा।

लेत उधारो जो कछू कबहुं न पाछे देत।
चाट जात गुण ना गुनैं जब मतलब तब हेत॥ ८७॥

क०। दीजिए उधार सो तौ धार में बहाय दीनो पानि पकरायो ताहि पानी तबहीं दयो। बड़ो बड़ो बातैं दै मिलत बड़े लोगन कों बड़े बड़े लालच बतावत बड़ो भयो। ठौर ठौर जात निज औगुन दुरायबे को औगुन बिरानो नित काढ़त नयो नयो। रसना प्रवेस तहां कंस को न लेस रहै उलटो बजावैं गाल गुन तौ कहूं गयो॥ ८८॥

सत्यबादी दोहा।

कहिबो सुनिबो विनय को सांचो सबै सुहात।
सदा विसासी साँच के झूठ देखि मुरझात॥

क०। सांचही सोहात बात सांचही के पन्थ जात सांचही कहत काम सांचही करत हैं। स्वामी को बिगार देखि नाहिन सोहाय ताहि आपनो बसाय तामें चूक न परत हैं॥ सांच के विसास में रहत मन रात दिन नाहक भुलाहि जो न मन में भरत हैं। देखे दगाबाजो के निराजो होत वाही छन झूठ के सुने ते उर दाह सों जरत हैं॥ ९०॥

लबार—दोहा ।

बातहिं हाथी गांव हय अन धन बातहिं माहिं ।
बात नहीं मिलवत सबै और नेक कछु नाहिं ॥ ९१ ॥

क० । बातनहीं हाथी गांव ऊंट बकसीस करैं बातन ही बातन खजाने बतलावैं हैं । बातनहीं देह गेह जानियो तुम्हारो सबै बातन पहार सों पहारहि मिलावै हैं ॥ बातन ही सूर संग लीने रिद्ध सिद्ध रहैं मानत जे बात तिन्हें धार में बहावै हैं । आपहू न देखें तो बतावैं कहा औरन को कागद के घोरा करि कटक चलावैं हैं ॥

खुशामदी—दोहा ।

अति मीठे लागत सुनत पुनि करुवे परिनाम ।
ताहि खुशामदि कहत हैं सो समुझौ गुन धाम ॥९२॥

क० । करत बड़ाई ताको कहां लौं बड़ाई कीजै बापुरो कुबेर कहां इन्द्र सो बढ़ावै है । अति अपनाय बिरदाय कै सकल विधि आपनो अरथ सरै ऐसेही पटावै है । जैसो ठौर जानै तहां तैसोई करत रूप रहैं करजोर फेर लाखन लुटावै हैं । झूठ को मिठाई सो अघात यों कहत जात बातनहीं बातन में मन्दर चढ़ावै हैं ॥ ९३ ॥

गरजी—दोहा ।

ऊँच नीच नेक न गनत सबै सुधारत साज ।
जो नद उतरे पार ह्वै कहा नाव सो काज ॥ ९४ ॥

स०। पाय परे कहै बात बनाय सुनाय सुनाय सबै गुन गावै। कारज नीच न ऊंच गनै कहिये जब और सो आपुन धावै। जोर रहै कर आठोई जाम करै कोऊ काम न बार लगावै। काज सरै बिसरै दुख के कहुं बैठ सुनै तिहि बाट न आवै॥ ९५॥

दोपरा—दोहा।

इते और उत और हैं सबै ठौर सब माहिं।
मन ऊपर सब सों मिलैं ते दोपरे कहाहिं॥ ९६॥

बे मुरौअत—दोहा।

काज न तौलौं अति चतुर परे काज जब कन्ध।
रूखे ह्वै सूखे निरस मूक बधिर अरु अन्ध॥ ९७॥

क०। काज न परत तौलौं मीठी मीठी बातैं करैं आन बने काज तब देखैं असमान कों। करिये अरज ताहि सुनि अनसुनी करैं कौन समझाय सकै जान तें अजान कों॥ जिनको जनम भर आपुन विनय कीजे आपने तौ वहै सुनि मूंदत हैं कान कों। रूखो रुख करिके दुरावैं दीठि ऐसी बिधि जैसी बिधि देखत उलूक मनो भान कों॥ ९८॥

मुरौवती—दोहा।

जहँ जैसो बिधि कहत हैं तहँ तैसो बिधि लाज।
ठौर ठौर पर भेद है करिये सुबुधि सुकाज॥ ९९॥

क०। असिल के नैन लाज साहब के बैन लाज सा-

धन के मैन लाज लाज कुल नारी की। धीरन के मुख लाज सूर के समर लाज जग व्यवहार लाज देत कर तारी की॥ दाता राखे पन लाज जती राखे धन लाज मारे तब नेक लाज होति है अनारी की। राजनीति राखे लाज पच्छिन की प्रीति लाज सुन्यो है परेवा तन त्यागत करारी की॥१००॥

मध्यम लज्जाव—दोहा।

कहुं सुधरत बिगरत कहूं कहूं लाज बे काज।
तिन तन सोभा देत है झूठो साचो लाज॥ १०१॥

स०। लाज तें एक सुधारत काज पै एक तौ लाज तें काज बिगारैं। लाज तें जूझत हैं रन में पग लाज तें एक परामुख धारैं॥ लाज तें देत हैं दान अनन्त कहूं पुनि लाज तें बात सुधारैं। बोल की लाज बड़े नर कौं नर नीच को लाजनहीं बिन मारैं॥

निर्लज्ज—दोहा।

सहस भांति समझाइयै नाहिन आवत कान।
तहां लाज कहँ पाइयै जिनके नाक न कान॥ १०२॥

क०। पच्छ जो पिता को ससुसारमित गान कहा बोहरा बजाज सब काहू सो ढिठाई है। सांच के सपच्छ मांझ पंच के न पन्थ मांझ साधुन के संग मांझ नीच सो इ-ठाई है॥ गांव में गड़े ते जाय सींव में उठावैं सीस एक की अनेक बात गढ़ि के बनाई है। चन्दन कुचर्चा घनसार सो घसोटन है गारी सो बयार जाके मार सो मिठाई है

उच्छलताक—दोहा।

देखें जहँ चढ़ती दशा तुरत मिलैं तहँ जाय।
पकरैं पाकी डार सों उच्छलताक कहाय ॥ १०५ ॥

हिमायती—दोहा।

नाग ऐरावत गरुड़ को पंचानन के माथ।
हिमायती को कूकरो लरति सिंह के साथ ॥ १०६ ॥

ढीठ हिमायती—दोहा।

काज कहैं निकसैं नहीं जहं तहं रहैं दुराय।
मानि पाथर ह्वै परे जिनके हाथ न पाय ॥ १०७ ॥

क०। केतो बेर कह्यो ताहि सुनत न चित्त लाय पच्छिम पठाइये तो पूरब को जांयगे। जोपै कहूं जाय ताको फेर न संदेस कहैं आलस में रहैं कछू कहौ तो रिसांयगे ॥ आपनो गरज तहां आन के घरज करैं पंचन में बैठे तें सयाने से जनायंगे। और जिते काम ताको हामी न भरत कहूं सेन अरु भोजन गुमान को कहायंगे ॥ १०८ ॥

दुष्ट हिमायती—दोहा।

जाहि देखि अँखियां जरैं अपनी कछु न बसाय।
कहि कारज कहुं टारिये फिर आवत तहँ जाय।

माया टाल हिमायती—सोरठा।

इनसों कहिये काम आप जाय कह और सों।
ऐसे होत अलाम, कहैं और औरै करैं ॥ ११० ॥

क०। आवत अबेर करै धीरे धीरे पाय धरैं एक छन

लागी तहाँ दिनहो लगावे हैं। जोई बात कहैं ताहि सुनो अनसुनो करैं काहू सों न डरैं बैठे बातन मिलावे हैं॥ नाम लेत और को मिलत कहुं और ठौर आवत न आगे देखि दीठि को दुरावे हैं। काग ज्यों डरत ऐसे काज सों डरत रहैं नेक होत न्यारे फिरि ढूंढ़े कहां पावे हैं॥ १११॥

अनभिज्ञ स्वामी—दोहा।

सेवक गुन साहिबन लखि सो याही विधि जान।
पाथर पानी अन्ध नग बालक श्रीफल मान॥

क०। जेते गुन सेवक में साहिब न जाने सुतो ऐसी विधि ताकी यह उपमा कहत हैं। आभूषण अन्ध कैसे गवंई गुलाब जैसे बालक पै श्रीफल को भेद न लहत है॥ पण्डित ज्यों मूरख के पास कहूं आनि बसे पाथर पै पानी दिन रातहीं बहत हैं। जो पै है सुसंग पै कुसंग को न भेद सकै फूल तिल बासे बैन कांकर बसत हैं॥ ११३॥

माथा शून्य—दोहा।

कहियत सो नेकुन रहत इत सुनि उत को जात।
जैसे नलकी बेह में फूंक न छन ठहरात॥ ११४॥

क०—कहिये सँदेस ताको लेस न रहत कहूं यहां सुनो और उहां और जाय कहो है। भूलत सुपन जैसे जाग के विचारे कोऊ ऐसेहो सुनत बुद्धि सोच अति गहो है। यातें भलो जंगल को तोता जो पढ़ायो होय नीको नर भाषा बोले ऐसो गुन सहो है। जैसे बंस नलका में फूंक न थिरात तैसे एकओर कहो एकओर जाति बहो है॥

ओछर—दोहा ।

इक जंबुक राजा भयो बोल न सक्यो दुराय ।
कोटि जतन कीजे करौ स्वान न खीर पचाय ॥

क०—जैसे एक जंबुक रँगाय तन राजा भयो बोलत बिगार जान्यो कपट जनायगो । पै न रह्यो बोले बिन जात निज बोलो जब जान्यो ढिग बैठ्यो सुतौ बाघ पुनि खायगो ॥ बरजि कहां रहाय पर्यो है सुभाव आय सुने जो बिचार बिन बोले न रहाय गो । जैसे नीबू नल को रहाय कहो कैतो बेर स्वान खीर खाय है पै कैसे को पचायगो ॥

व्यर्थबादी—दोहा ।

ऐसे नर सों दूर रह जिन बोले नहिं बन्ध ।
बुद्धिहि में चल विचलता कहँ तिनसों सम्बन्ध ॥

क०—बोले में न बन्ध जाको कैसे सनबन्ध बनै ऐसे को भरोसो करि काहू सो न तोरिए । बुद्धि की बिचलता सों जानत न सांच झूठ जोहो कछु कहै ताको सुनत न थोरिए ॥ भूत का मिठाई जो बतावे भरमावे ताहि चित दै सुनत मति लालच मरोरिए । ख्यात जे हरामी तिहि ठौर तिनहीं को काम आपुन ह्वै बांके रहैं न्यारे कर जोरिए॥११९

फूटे ढोल – दोहा ।

एक बिगारत सकल विधि एक सुधारत आनि ।
सबहीं जिनकी सारखे फूटे ढोल बखानि ॥१२०॥

क०—एक सों कहत बात एक सों बिसरि जात साझ को विचार और और परभात है । जासों तासों बातें सब अन्तर की कहै देत रीझ खीझ एकहू न और सो जनात है ॥ जोहो भरमावे ताकी बातें सब मानत है कहत डेराय तासों अतिहीं डेरात है । बोलत है जिवे बोल वे तो सब सोल पोल ऐसे विधि फूटे ढोल सो नर कहात है ॥

मूर्ख—दोहा ।

कहुँ खेलत लरिकान में के सोवत घर बीच ।
सबहो जिनके सारखे जानि ऊंच न नीच ॥ १२२ ॥

क०—मन तो रहत नित खेल औ खिलौना बीच हँसि हँसि देत कोऊ मिले जो हँसावे है । कोऊ डरपावे तहां तबहीं डरपि जाय रहत अधीर सदा धीरता नसावे है ॥ नेक दबकाइये तो छन मांझ राय देत हेत जो करत तासों हितहू नसावे है । दीसत को बड़े पै मढ्यौ है नर कालबूत प्राण सदा पसुहो के उर में बसावे है ॥ १२३ ॥

कनक पिंजरा काक—दोहा ।

कनक पिंजरा काक सम ते नर घर डोलन्त ।
गरुए अनबोले लगें हरुए मुख बोलन्त ॥ १२४ ॥

क०—कनक के पिंजरा में काक हरा देख्यो आनि आनन अतुच सदा रहत ससंक है । तौलोंहीं रहत बोझ जौलोंहीं अबोले रहे आन बने काज बिन लाज अति रंक

है ॥ देखत को नीको अति फीको मुख बोलतहीं सब सों कुराह कहै आप अति बंक है । ऊपर सुवेख फल मानो इनरायन को भीतर जहर भरे जग को कलङ्क है ॥१२५॥

आमिक —सोरठा ।

अमित सदा बिन काज, बिन उद्यम निस दिन रहै ।
अँग अँग सून्य समाज, मन औरै कह और मुख ॥१२६

क०—ठौर ठौर मारत फिरत मूड़ काज बिन उद्यम न सूझै कछु बुद्धि भ्रम में परो । कोऊ बात कहै ताको उत्तर न देत कछु सुनि कै बिसरि जात देखत घरी घरी ॥ बात जो है कहनो सो रहनो न जानै कछु मुख तें निकरि जात जो है मन में धरी । आमिक के लच्छन ये दच्छन बिचार लेहु ढूंढ़ै ते उपासन कै आसन कहूं जरी ॥ १२७ ॥

रोवनो सूरति—दोहा ।

सदा कुढ़त मन में रहत कहत काम रोवन्त ।
सब हमरे पीछे परे लेहिं हमारो अन्त ॥१२८॥

पोस्तो—दोहा ।

जब पोसत पावैं नहीं नाक चुअत अकुलात ।
जासों तासों खिज उठैं एक न उपजत बात ॥ १२९ ॥

क०—पोसत को खायो किधों पायो परमेश्वर को बांधत पिछौरी एक बात करै वाही को । प्रहुप पिता को मानो आग में प्रवाहिबे को प्रगट्यो सपूत ज्यों भगीरथ ब-

डाही को ॥ कूंड़ा धरि आगे पाछे जिकिर करन लागे हम सों लरै सो भागै परै कला ताहीको । काबिल बलख कच्छ कोकन से केते कहै पोसत पिएवे बातें करै पात साहो को ॥ १३० ॥

जंघने—दोहा ।

जंघन पत्थर आलसी कौन सकै समझाय ।
कुढ़ि कुढ़ि कै छातो पचै बकि बकि मूड़ पिराय॥१३१

क०—जंघत कहत बात जंघतही पंथ जात जंघत-हीं खात काज कहे तब जोवैं हैं । जोपै समुझाय कै पठैये कहूं ताहि पुनि वाही ठौर जाय कै निचिन्त होय सोवैं हैं ॥ उजरि बिगरि जाय नाहि न कहत आय कहो समुझाय तब सोस गहि रोवे है । सूझत न सांझ भोर काहू को न देखै ओर ऐसो को भरोसो जो करत सु तो खोवै है ॥

बड़े घर के ठोकरा—दोहा ।

विकत बड़न के नाम ते आपुन में नहि अंस ।
बड़ा गेह के ठाकरा बूड़ा जिनतें बंस ॥ १३३ ॥

छ०—मोटे घर में जन्म जाहि सब कोउ जाने ।
ता घर होय कपूत बडे पुरखानि बखाने ॥
जापै बैठत जाय ताहि बहु भांति दबावै ।
जहां चलत नहि जोर तहां ते उलटो आवै ॥
कछु बात कहत कोउ काहु सो मन जानै मेरो कहत ।
वह बड़े गेह के ठाकरा जान बचै तिनसों लरत ॥ १३४

गंवार बड़े आदमी—दोहा।

जामें बोझ रहै नहीं लघुता मालुम होय।

अधिक बड़ाई आपनी करै आप जो कोय ॥ १२५ ॥

सो०—इहि बिधि सबहि दबाय, रहत आप सिरताज ह्वै।

सबहीं सो सियराय, जो बिच कोउ बोलै कहूं ॥१२६॥

हठी—दोहा।

भली बुरी नाहि न गिनत रहत पच्छ गहि एक।

दुख सुख सो नाहिं न डरत कबहुं न छाड़त टेक ॥

क०—जाहि को करत पच्छ ताहो को निबाह करैं जासो खुनसाय ताहि मूल सो मरोरै हैं। ज्यौं ज्यौं कोउ कहै त्यौं त्यौं अधिक अधिक होत काहू को न मानै कहो सबही सो तोरै हैं॥ रुख में रहत तासो आप रुष हेरत हैं काहू के सिखाए कहूं लेत नाहिं कोरै हैं। जोई बात पकरी सो हारिल को लकरी ज्यौं होय जौ बिगार तोऊ हठ को न छोरै हैं॥ १२८॥

क्षुधित चाकर—दोहा।

खरच कभूं पावें नहीं सबै सतावै लोग।

रात सीत दिन भूक मरि सेवा करो कि जोग॥ १२९॥

क०—खरचो न पावै खत करि करि गांठ खावै रहैं मुंह आगे जैसे कान गहे वाकरो॥ धोबी अरु नाई औ चमार दरजी लुहार मांगत दबाय कहै साहिबो है आकरो ॥

घर खरचो मगावै मोदी जुदोई सतावै तौलत तगादो करि दाबत है ताकरी। रात मरें जाड़े दिन भूख मरें गाढ़े सुनो साहिब न चोख्यो कछू कीनी हम चाकरी॥ १४०॥

विरही—दोहा।

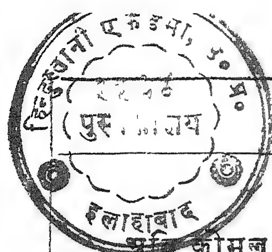
सरद निसा उज्जल सरस रितु बसन्त द्रुम फूल।
बरखा कोकिल मोर धुनि सुनि लखि लागत सूल॥

क०—अतिहीं उदास है न राखे कहुं और आस लेत है उसास जाके अन्तर को सार है। भूल गए प्रान तो च-हत को बखान पान विरह अनल जागि कीन्हीं तन छार है॥ ठौर ठौर देखे हैं सुने हैं पुनि ठौर ठौर और एक रोग ताको औषध अपार है। जाही के सुनत जाहि देखत प्र-गट होत ताही सो मिटत याको एक उपचार है॥१४२॥

स्त्रीजीत—दोहा।

जा घर में तिय को चलन पुरुष मनहुँ पाखान।
सो घर सबहीं परिहरयो जैसे तीछन बान॥ १४३॥

क०—बाजीगर मानो यह बन्दर नचावत है मन्त्रन तें सांप जानो सीस नाय देत है। वाको ओर देखतही देखत धरा की ओर अन्तर तपै न कहै हेतु करि चेत है॥ पुरुष के पच्छी ते विपच्छो ह्वै खिसाय जाय नैहर के बीच जोई चाहे सोई लेत है। पंचन में बैठे तहां पानो को मगाय पोवै मन्दिर गए तें मानो बैठ्यो धूमकेतु है॥ १४४॥



स्त्री गुण—दोहा।

अति कोमल बोलति वचन बात कहति मुसुकात।
कटि लचकावति चलति जब नारी गुन सु कहात॥

क०—जहां गृह काज तहां निपट निपुन होति कहे जेती बात तामें नेकु न सकाति है। चित चतुराइन सों चौंकि चहुंओर देखे पेखे कुल आपनो को अतिहो लजाति है॥ कटि लचकाय सरसाय दृग हाहा करि करति मजाक कोज अतिहो सोहाति है। समुझे सकुन जेती गुन की परीक्षा करि नारी गुन नर एते गुन तें कहाति है॥

उपपति—दोहा।

धन यौवन सब विधि सुघर अरु समरत्थ सहाय।
अन्त न काहू रस कह्यो पर नारी पै जाय॥ १४७॥

क०—चञ्चल विकल चित्त ठौर ठौर देखत हैं, काम के पटलता तें सूझत न मरमे। सङ्क न करत सौंह खात सठ सबहो पै साह ज्यों कहत सांच ह्वैके अति नरमे॥ और सों कहत बात औरन के संग जात, तन धन जोबन गवां-वत सो भरमे। नाहिं न उसास लेत कोरा परे कूकर ज्यों मारत फिरत मूढ़ लोगन के घर मे॥ १४८॥

गुण्डा—दोहा।

कहत भूलना लर्गान को अधिक विरह रस आनि।
रहत चित्त पर नारि मे ते सब गुण्डा जानि॥ १४९॥

क०—अधन तें आपहि सुजान ह्वै रह्यो है सठ, मन तो रहत सदा पानी के निवान मे। रूपवन्त देख नर नारी सों सुभाय रहै, एकहि बतावै एक आखन की सान मे॥ कहूं सुरचंग कहूं बाग में उपंग लिये, सीस पर केस नख एक मनि पान मे। पच्छी लै पढ़ावै कहूं मादिक मगावै, निसि सोवत में आवै ह्वै मगन अति तान मे॥ १५० ॥

चिकनियां—दोहा ।

तन चिक्कन उज्जल बसन निरखि सँवारत अंग ।

आपुन अस आपुन कहत चाहत रंग सुरंग ॥ १५१ ॥

छ०— पल पल बाँधैं पाग बसन अति उज्जल राखैं ।

गहुरि जाय बाजार पान चाभैं प्रति भाखैं ॥

रूपवन्त गुनवन्त नजर कोउ नाहिन आवैं ।

जाहि ताहि निज सुजस आप बर जोर सुनावैं ॥

निज छांह निरखि राजो रहत पुनि देखत दर्पन सही ।

मन रहत तेल अरु मैन में जबहिं बेस चुपरत नई ॥ १५२

हौसी - दोहा ।

देखि परायो धन बसन मन ललचावत सोय ।

करता जो ऐसो करै तौ जु भलो बिध होय ॥ १५३ ॥

क०—जहा बनि आवत तहां तौ सुख पावत है, नाहि न बनति तहां सोच करै धन कों। भूषन बसन गेह बाहन पराये देखि, ऐसे जब होहिं तब स्वारथ है तन कों ॥ कहूं

तो सुनत कहूं देखत थकित होत, सबै ठौर चञ्चल सुभाव ऐसे जन कों। जाके है बिचार ताकी एक निराधार सदा, उठत जे हौसे सो प्रकार कांचे मन कों ॥ १५४ ॥

नास्तिक—दोहा।

मख तीरथ गुरुदेव मैं क्यों धन खोवे कोय।
इनते कह फल होतु है हमै बताओ सोय ॥ १५५ ॥

क०—मात तात भ्रात सों सदाहो जे लरत रहें, नाहि न करत सङ्ग बड़े कौन होत हैं। देव द्विज दाता देखे अंतर दहत अति, पावत हैं कौन दिये योंही धन खोत है ॥ करिये उपाय सोई लागै कछू हाथ यहां, हारे हैं जगत हेरि सांचहो को रीत हैं। बावरे न बूझै ते उरूझै झूठी बातन मैं तीरथ सकल देखे पानोही के सोत हैं ॥ १५६ ॥

आस्तिक।

प्रतिदिन रवि ससिहो उदय होत घाम जल सोत।
घट घट ठाकुर शब्दमय दरसत सांचो रीत ॥ १५७ ॥

क०—अबलौं धराधर धराको सिर धारि रह्यो, धारा धर धरनी पै धारा बरखत हैं। उगत है अन्न अवनी पै देखो आठो दिस, प्रान के अधार पाय सबै हरखत हैं ॥ ससि अरु सूर समै साधत हैं सांची यह, सांझ पुनि प्रात दिन रात सरसत हैं। एते पर मूढ़ तू न मानत है सांच कहूं बोलत हैं सूधे तिने कैसे परखत हैं ॥ १५८ ॥

सलज्ज भिक्षुक ।

क०—काहू ने उठायो तो उठ्यो है क्योंहूं लाज होय पोछेहौ परत पाय टूट्यो आंगि आंगि है । मांगिबे के दुख तें मरन सुख मानत है धारब उसास उर बेध्यो जनु सांगि है ॥ सोचरु संकोच के समुद्र में पर्यो है आनि, ढीठता जहान बिन कैसे को जलांगि है । कर जानै काहू पे न कबहूं पसार्यो होय, कांप करि ताहि तू मँगाय है तो मांगि है ॥ १५९ ॥

क्षुद्र—दोहा ।

नेक न बिगरत आपनो तोज निर्फल नाद ।
भले भले निज रव से बचन बिगारत बाद ॥ १६० ॥

क०—महा सीतकाल में लोहार की दुकान मांझ, कूकर छिप्यो है आनि आंच के अधार में । वाके घर ऐहड़ा दे चोरतो न आन्यो कछु, योंही उठि दीर्यो सोर सुनि के बजार में ॥ सीत में सकल गात ज्यों ज्यों सकुरात जात, त्यों त्यों अति सोर करै आप तिहि काल में । ऐसो नर नीच गुण आपनो बचा न सकै, नग से निकारि डारे रसना प्रचार में ॥ १६१ ॥

सहवासी वैरी—दोहा ।

अपने ही जे ह्वै रहत अपने सदा कहात ।
गुन तजि औगुन आपने करत फिरत विख्यात ॥

क०—आपने रहत पास आपनोही जानत है, आपनो ही खात फिरि आपनो कहावै है। आपनोही औगुन कहत निसबासर है, आपनो सुनत गुन आपही दुरावै है॥ उनके सुनत बात आपुन जो कीजै कछू, जानत न कोऊ जाहि जन को जनावै है। ताही सो कहत निज कांख में बसत बेरो, ऐसो वर नीच ताहि कौन समुझावै है॥ १६३॥

कैफी—दोहा।

कहु बोलत रोवत हँसत कहुं वड़पन कहुं गार।
मादिकता खाये कछू बोलत विविध विचार॥ १६४॥

क०—कहूं तो हँसत कहूं रोवत बकत कहूं सूझत न साच झूठ फिरत न बार है। करत बड़ाई कहूं गारी अनगनो देत कहूं समुझाय कहै स्यानप अपार है॥ आपही को हित गुन औगुन कहत है जू नीच व्यवहार सबै मादिक पुकार हैं। ज्यो ज्यो अति खातु त्यों तरङ्गनि में बह्यो जातु सूछम ते होत कछु बुद्धि को बिचार है॥ १६५॥

मसखरा—दोहा।

व्यंग्य ललित बोलत सबन रसन हँसन की दाव।
जहँ जैसो कछ चाहिये तहँ तैसोई भाव॥ १६६॥

क०—ता हित जो बोलतु है अन्तर को कौन लहै बातन तें बात छानि बातही में ठानो है। नाहिन हँसत मुसकात है न तारी देत बोलत बिचार आना घात कैसो

बानो है ॥ चातुर के चित तौ सुनतही करत पार और तो सुनत हैं पै काहू नहीं जानो है । काहू ने कही न होय ऐसी टोक लावतु है अवहीं अछूतो मानो अम्बर ते आनो है ॥ १६७ ॥

द्वेषी– दोहा ।

गुनमय को औगुन कहै मन गढ़ि सीस धुनाय ।
अब काहू को का रहो सबै बड़ाई पाय ॥ १६८ ॥

क०—देख गुनवन्त ताको औगुन बनाय कहै जाने मति मानो याहि ऐसो मति ठानो है । और कोऊ कहै ताके बोलही कहत बात ढाहत हैं मूलही ते मानो अनु मानो हैं । जो पै धनो जागै है ता चार के रिसाये कहा राजा सावधान है तो एकहू न मानो है । जामें गुन होत ताहि गाहक मिलत आनि जहां दरबार तहां ऐसो पुनि झानो है ॥ १६९ ॥

उपकारी — दोहा ।

कहँ काढ़ोगे दोष में कीजे कछु उपकार ।
बुरे भले की वासना रहत जान ससार ? ॥ ७० ॥

क०—करनी करै सो होइ फेरि प्रगटत सोई निगम बिचारि रिषिनाथ सांच सो कह्यो । जाचक बसन्त रितु रूख न बिमुख होत हरे पात हरे खरखरे त्याग को सह्यो ॥ दान दै उधारे गात पाय तरवर पात फूल बन सम्पति न-

बीन अति लहलह्यो । जीवोई सकल सार दीवो करौ बार २ बिन दीने अपत करीर अपते रह्यो ॥ १७१ ॥

उदासी—दोहा ।

सब रचना करता रचो करता रचना माहिं ॥
सांस सांस भूले नहीं तू क्यों भूल्यो ताहि ॥ १७२ ॥

क०—पानीहो की बुन्द तातें पिण्ड कों प्रगट कीनो आंच तें उबारिबेको बीच ओट नाखो है। अन्तर तो पोखि पुनि बाहर बनायो वय सुरत सँभारो तौलों दीनता न भाखो है ॥ कल तें चलावत जगत सबै पूतरी ज्यों बाजो को बनाय पुनि आप रह्यो साखो है। भूल्यो निज ताहि जो न भूले छन एक तोहि आस करता को जिन सांस गिन राखो है ॥ १७३ ॥

आशा—दोहा ।

कबहूं सहिये दुसह दुख सुख लहिये कहुँ सार ।
जो करनो करता करै सो सबही निरधार ॥ १७४ ॥

क०—कबहूं के भूखे अति रूखे सूखे टूक बिन कबहूं के भूखन सुधार सोई चहिये। कबहूं सकल साज बाज गज-राज चढ़ि कबहूं पयादे पाय दौर दुख सहिये ॥ कबहूं के आप को देखन सब आवत हैं कबहूं के आपही सरन जाय गहिये । आनि अभिमान सो अजान कवि राम कहै जैसो बिधि राखै राम तैसो बिधि रहिये ॥ १७५ ॥

अनाशा—दोहा ।

काल अनल इन्धन सुतन पवन प्रचण्ड उसास ।
जरत राति दिन देखिये कह जीवन की आस ॥१७६॥

क०—नाव को समाज कैधों वसिवो सराय कैसो तीरथ को मेला तामें कबलों रहायँगे। आतस की बाजी तन साचो है सपन ऐसो भूतको कटक देखि यामें भरमायंगे ॥ पानी को बुला जो जैसे पानी में बिलाय जाय ऐसे पंच भूत पंचभूत में मिलायंगे। देखत हमारे चलो जात है जगत ऐसे देखत जगत के हमहुं चले जायंगे ॥ १७७ ॥

सत्संगति—सोरठा ।

जगत दाघ उर जास, चन्दन सम जिनके बचन ।
हिय सुनि होत हुलास, सो सतसंगति कीजिये ॥१७८॥

आरत—दोहा ।

दुख देखत संसार में प्रभु सो करै पुकार ।
त्राहि त्राहि गुरु त्राहि गुरु राखि लेहु इहि बार ॥

कवित्त ।

जगत प्रवाह की तरंग लखि चौरासी में महाघोर धार मोह नाहिन थिरात हूं । चञ्चल अपार बात सूझत न बार पार ममता के भौंर में भ्रमत दुख पातहूं ॥ कौन करि उद्यम अनेकनि सो हाखो प्रभु जात स्नेह कारज सो अति अकुलात हूं। कहाँ मैं पुकारि नाथ अबको उबार न तौ बहत बहत आयो फेर बह्यो जात हूं ॥ १८० ॥

ज्योंही तें उठायो त्योंही चाम ओढ़ि आयो महा रूप नर नारी को रचायो सोई रच्यो हूं । ममता मृदङ्ग तान स्वारथ पै तोरत हौं साथी परपञ्च रैन जड़ता में पच्यो हूं ॥ एक एक हार तें अपार बेर फेख्यो रघु अवरो विचार काहू स्वांग तें न बच्यो हूं । कर गहे राख क्यों तमासगीर होय रह्यो नायक निगुन तैं नचायो त्योंहीं नच्यो हूं ॥ १८१ ॥

ऐसो महा चोर है मिल्यो है जाय चोरन तें चोरीही करत है पै काहू सों न डरै है। रसना श्रवन नैन साथी सब संग बिषै काम क्रोध लोभ सुतो एकता न टरै है ॥ चसका हराम को चखाय कै बिगाख्यो मोहि तेरी ओर ऐंचत हौं ताही ठौर अरै है । नाथ मन हाथ नाहीं कहत पुकारि तोसों तेरे घर न्याव है तो सूधो क्यों न करै है ॥ १८२ ॥

राजा ।

देव द्विज माने सनमाने कवि कोविदन, सोमा साव-धान सदा रहै सब काज सों । जोगी सों अजीत जीत राखे सत्रु संगरमै नीति प्रजापाले घाले बदनीति राज सों ॥ न्याय बिना पच्छ करै सुनै दीन फरियाद नीकी धनी औ गरीब सब मामिले के साज सों । दया धर्म दान क्रिबवान कर गहे जोई सोई महिपाल में महान महाराज सों ॥ १ ॥

मन्त्री ।

आदि अन्त बात संजु मन्त्र सो विचारे हैन गनी औ

गरीब न्याय समै सम पेखै सो । देस परदेश को खबरि सुनिवे को चाव आमद खरच सांझ भोर अवरेखै सो ॥ देस दल राजो राखै बात ना विचल भाखै डिगै ना डिगाए लाखै लोख सम लेखै सो । गोकुल सराहै प्रीति रीति को निवाहै बद नीति को न चाहै मन्त्री नीति नैन देखै सो ॥२

चाकर ।

आवै ना वुलाये विन द्वार पै रहत सदा थोरो बैन बोलै सत्य नीति अवगाहिये । डाँड़ बाँध बैन कटु बोलन के सासन के त्रासन के दोख दुख रहत न जाहिये ॥ भूख प्यास नीद घाम सीत को सहनसील संगर सुनत होत अधिक सुखो हिये । चौगुनो चलाक चारु चख लखि काम करै चाकर यों चतुर चमूपति को चाहिये ॥ ३ ॥

वकील ।

मामिले को चोज खोज लेत गहि गाढ़े ऐसो संपति गहत जैसे प्रकृति वखील को । भनै विजै भूप अंग इंगित सो जानि लेत बात परहो को बोलै बानो सुभ सील को ॥ देस परदेस को नजोर लखिवे को खोज आपनो न भाखै मोज काहू सन होल को । राखत रुआब बड़ो समुझै सिताब बात हाजिर जवाब राखै अकिल वकील को ॥ ४ ॥

कवि　हरिपद छन्द ।

अनुभव बुद्धि नवीन युक्ति धरि उत्तम कवि सो होय ।

पर आखर कों त्यागि अर्थ गहि कह मध्यम कवि सोय॥
पद धरि वहै अर्थ नहिं दू जो कही अधम कवि सोव।
पर-कवित्त मे नाम धरै निज अधमाधम कविराव॥ ५॥

कोविद—कुण्डलिया।

राजै मति प्रतिभा विसद सास्त्र सकल अभ्यास।
अर्थ विचारै सत असत कोविद बुद्धि प्रकास॥
कोविद बुद्धि प्रकासि भेद भ्रम तम हरि लेहीं।
पय पानी सो विलग गुनहिं ऐगुन करि देहीं॥
करि देहीं भ्रम दूरि सील चित मृदुल विराजै।
दूखन दीहराय भूरि भूखन रुचि राजै॥ ५॥

धन प्रशंसा—दोहा।

देव दनुज मुनिजन मनुज सब को धन की चाह।
जग कारन कारज सधै विन धन नहीं निवाह॥ ६॥

कुण्डलिया।

पावै पद गति मुक्ति नर करि तीरथ व्रत दान।
बाग बावली ताल थल कीरति जितिक जहान॥
कीरति जितिक जहान वरनि तेहि नाम बड़ाई।
धन सबही को मूल सबै अनुकूल सदाई॥
सदा सबै अनुकूल सबहि गुन आए आवै।
पतितहु पावन करै परमपद छन में पावै॥ ७॥
हारे नर कते खरे बड़े गुनी गुन गाय।
बोलत दीन अधीन तेहि संपति जाके हाथ॥

संपति जाके हाथ बरनि पर बत सो राई ।
आनि बानि कुल कानि मानि महिमा प्रभुताई ॥
आनि बानि कुल कानि नीच रुचि वीच निहारे ।
कवि कोविद की भीर सदा धनपति के द्वारे ॥ ८ ॥

दोहा ।

सो गुनज्ञ सरवज्ञ जग सो कुलीन नरनाथ ।
सो कोविद कवि चतुर अति धन है जाके हाथ ॥ ९ ॥
जाके धन हित लोग सब सेवा करन सदाहि ।
जात जबै धन हाथ सो बात न पूछैं ताहि ॥ १० ॥
आँखि कान मुख पानि पद वहै जाति वह गात ।
जात जबै धन हाथ सों वह आने ह्वै जात ॥ ११ ॥
गुन गरुआई कुल करम मान बड़ाई बात ।
धन होते सब होत है धन जाते सब जात ॥ १२ ॥

धैर्य्य प्रशंसा ।

तापनसै ज्यों चन्दकर रवि सो निसि अँधियार ।
विपति विनासन है सदा धीरज धरम विचार ॥ १३ ॥
दुख निधि पारावार को जो नर चाहै पार ।
परम धरम नौका गहै धीरज खेवनिहार ॥ १४ ॥
बसत न जाके चित्त में धीरज धरम विवेक ।
सो नर स्वान समान जग दौरत द्वार अनेक ॥ १५ ॥

धर्म प्रशंसा ।

मात पिता गुरु नृपति अरु बानी वेद पुरान ।
प्रतिपालन करिबो सदा सोई धर्म प्रमान ॥ १६ ॥

राखैं कुसमय मे धरम जे हैं पुरुष सयान ।
धाम धरा धन तृन सरिस वारैं तन मन प्रान ॥ १७ ॥
तेग धार सहिवो भलो सुगम जरै वो देह ।
बचन बोलि प्रतिपालिवो यहो कठिनता नेह ॥ १८ ॥

बचन कवित्त ।

बचन के हारे बलि वामनै नपाए पीठ सिवि औ दधीच कोह काढ़े निज गात को । बचन के हारे हरिचंद बिके डोम घर भूमि औ विभव त्यागि सेवा नीच जाति को ॥ बचन के हारे दसरथ परिहस्यो प्रान पुत्र को पठाये बन प्रन पूरी ख्यात को । तन मन धन प्रान बात पर वारे ब्रज बात प्रतिपालिवो बड़ाई बड़ो बात को ॥ १९ ॥

दोहा ।

राजनीति औषध अमल दान मान जल धोय ।
दृग अंजन अंजित करै तौ मदअंध न होय ॥ २० ॥

चतुर्विधि नीति ।

ऊँचो नीच दिखाय तिहि समता सो समुझाय ।
काम करै सब आपनो यह है साम उपाय ॥ २१ ॥
समुझाये समुझै नहीं तब तेहि लोभ दिखाय ।
साधे कारज द्रव्य दै कहिये दान उपाय ॥ २२ ॥
समुझाये माने नहीं दानहु सो न पत्याय ।
तर्जन ताड़न तेहि करै बंधन दण्ड उपाय ॥ २३ ॥

संधि करै रिपु हितन मे पारसवरती पाय।
भेद भाव करि साधिये सो कह भेद उपाय॥ २४॥

कवित्त।

देस काल चाल को दिखाय उपदेस वेस साधि लेत काज निज मति अनुमान सों। नेक बद बात पर जानि लेत दाम दै कै संधि को लगाय साधे हेतु वलवान सों॥ चोर बटपार दलिवे को दच्छ सदा स्वच्छ गोकुल विलोकि कौन कीजिये बखान सो। राजा सो अजोत जो करै अभेद राज नोति साम दाम दण्ड भेद वेद की विधान सो॥ २५॥

बारन मे बंधन औ दण्ड जोग धारन मे मान वनिता में मद राजै गजराज में। रोगी ग्रन्थ बैद कवि जोगी चक्रवाक रैनि आंधरो उलूक लुकै द्योसही के काज में॥ पर दोष चोरो व्याज निन्दा अलंकार ब्रज नाहीं नवला के सुख केलिकला काज में। बागन में बैर एच पेच परै पागन में भोति है दिवार राज नोति ऐसो राज में॥ २६॥

दोहा।

नृपति निरादर गुन करै ऐगुन गनिये सोय।
सिन्धु किये जल खार विधि नीर न पीवै कोय॥२७॥
नृप ऐगुन जो आदरै गुन गनिये जग सोय।
बक्र चन्द्र शिवसीस लहि बन्दत है सब कोय॥ २८॥

कवित्त।

दोष है किये दुराव मित्र मंजु गुरु संग दोष है भरोस

दै के करै फिरि धोख है । दोष है कराल किये दुरभाव जोगिन सो दोष है दुसह संत विना मन तोष है ॥ दोष कुल रीति त्यागी दोष नीच प्रीतिपागी दोष सब ठौर बोलै गर्व करि रोष है। दोष परनिन्दा किये दोष देखे परदार बड़न को दोष हेरबोई बड़ो दोष है ॥ २९ ॥

दोहा।

सबै दिवस बस नीद के सबै निसा दिनमानि।
कहा कुशल तिहि देस को जो नरेस यह बानि ॥३०॥
पर उपदेसी नर निपुन देखे जगत अनेक।
निज स्वभाव तें अनुसरैं ते लाखन महँ एक ॥ ३१ ॥
निज पुरुषारथ नहिं मरै पिता आस मजबूत।
जग जीवन जाको यहै सो है पूत कपूत॥ ३२ ॥
एक एक सिर बार में जो गुन होय हजार।
एको फलदायक नहीं जो दिल होय विकार ॥ ३३ ॥
व्यसनी क्रोधी आलसी मानी मुख बाचाल।
असन्तुष्ट निरभक्त तु खल तजै सात महिपाल ॥ ३४ ॥
पण्डित के मुख गुन बने घने रहत सब काल।
दुरजन चित में बसत है केवल दोष कराल ॥ ३५ ॥
मूरख सुत पण्डित भये नीच जाति सुभ रूप।
निरधन धन पाए गनैं तृन सम त्रिभुवन भूप ॥ ३६ ॥
मति कहु मनके मरम को जग दुरजन के पास।
मुद मानैं पाछे हँसैं आगे होय उदास ॥ ३७ ॥

दोहा।

परस्वारथ जो होय कहुँ कहु तहँ झूठी बात।
अमर करै कीरति जगत अमी सरस सरसात ॥ ४६ ॥
सुख में फूटै कनक घट मति सोचै मतिमान।
दुख में तन को हानि लखि मेरु बराबर जान ॥ ४७ ॥
सहे बिना दुख देह के सुख जग लहै न कोय।
काटे पै कदली फरै सींचे फरे न सोय ॥ ४८ ॥
कुल आचार सों जानिये तन लहि असन बखान।
सुनत एकहो बोल के बैर प्रीति पहचान ॥ ४९ ॥
रजनी दीपक रैन पति अवनि-दीप अवनीप।
तीन लोक दीपक धरम सुत सपूत कुलदीप ॥ ५०
बोलत बोल कठोर जे बिख सो बिखम कराल।
वह खाए मरि जात है वह सुनि होत बेहाल ॥ ५१ ॥
बैर भाव दुरभाव जग रोख रुखाई बात।
बोलतहीं मृदु बैन के मनतं सिगरे जात ॥ ५२ ॥
जो चाहै यहि जगत में अरि मेरे नहिं होय।
सील सरल सुचि मृदु बचन सब दिन बोलै सोय ॥५३॥

कुण्डलिया।

पाले सुख मंजुल बचन सील सयानप सोय।
राखै राजा रंक जग सुनिबे को रुचि होय ॥
सुनिबे की रुचि होय सदा सबहो के मन में।
नर में है गुन निकार एक है पच्छो तन में ॥

ग्राम रीति कुल रीति लहि देस रीति मत रीति ।
भूपति भाषा होय जो ताहि पढ़ै करि प्रीति ॥ ३८ ॥
सुक्र कहे सत बचन को बलि बावन छल जानि ।
सो न भयो अपजस ठयो भयो आँख की हानि ॥ ३९॥
पहिले सुख जासों मिलै अन्त दुखद परिनाम ।
पाछे पछताहट रहै होवै सबै न काम ॥ ४० ॥
समै सांकरो और की लखि न करै उपकार ।
विपति परै जो ताहि पै कोउ न पूछनहार ॥ ४१ ॥
आँखि कान मुख पानि पग सोभित सुन्दर गात ।
होत असुन्दर देह सब कढ़त कूर सम बात ॥ ४२ ॥
करै छोह जो आपनो रहु ताकी पगधूरि ।
द्रोह करै तेहि आँखि में धूर डारिये भूरि ॥ ४३ ॥
जद्यपि झूठी बात प्रिय पहिले मीठी होय ।
कहर करति है जहर सों पाछे दुख लहि सोय ॥ ४४ ॥

कवित्त ।

झूठो देह धारि हरि छले बलि बावन जू भए प्रतिहार द्वार त्यागी प्रभुताई है। झूठोई स्वयम्बर दिखायो ब्रज नारद को साप अङ्गीकार करि नर-तन पाई है ॥ झूठे के बिधान विधि निदरे प्रमान वेद भये बौध रूप अजौं मुख ना देखाई है। झूठे की झुठाई आदि मीठो है अमातें वादि अन्त में जहर सों कहर करुआई है ॥ ४५ ॥

दोहा।

परस्वारथ जो होय कहुँ कहु तहँ झूठी बात।
अमर करै कीरति जगत अमी सरस सरसात ॥ ४६ ॥
सुख में फूटै कनक घट मति सोचै मतिमान।
दुख में तन की हानि लखि मेरु बराबर जान ॥ ४७ ॥
सहे विना दुख दोह के सुख जग लहै न कोय।
काटे पै कदली फरै सींचे फरे न सोय ॥ ४८ ॥
कुल आचार सों जानिये तन लहि असन बखान।
सुनत एकहो बोल के बैर प्रीति पहचान ॥ ४९ ॥
रजनी दीपक रैन पति अवनि-दीप अवनीप।
तीन लोक दीपक धरम सुत सपूत कुलदीप ॥ ५०
बोलत बोल कठोर जे विख सो विखम कराल।
वह खाए मरि जात है वह सुनि होत बेहाल ॥ ५१ ॥
बैर भाव दुरभाव जग रोख रुखाई बात।
बोलतहीं मृदु बैन के मनतें सिगरे जात ॥ ५२ ॥
जो चाहै यहि जगत में अरि मेरे नहिं होय।
सील सरल सुचि मृदु वचन सब दिन बोलै सोय ॥५३॥

कुण्डलिया।

पालै सुख मंजुल वचन मोल सयानप सोय।
राखै राजा रंक जग सुनिवे को रुचि होय॥
सुनिवे की रुचि होय सदा सबही के मन में।
नर में है गुन निकर एक है पच्छो तन में॥

पच्छी तन में एक बेस कीमत है आलै।
प्रियबानी के हेत कीर कोकिल नरपालै॥ ५४॥

दोहा।

बोलि न आवै मृदु वचन जनि कठोर कटु बात।
है इन दोनों तें भलो चुप रहिवो जग ख्यात॥ ५५॥

कुण्डलिया।

कीजै बाद बिवाद मत जासों हारे हास।
जीते पै अति अघ लहै चित चतुराई नास॥
चित चतुराई नास होत नीचन तें लागी।
मौन भए भल होय कितौ तोहि ढिग तें भागी॥
भागि तासों दूरि कछू उत्तर नहिं दीजै।
समै सँभारै आप अधम सों बात न कीजै॥ ५६॥
कीन्हें उद्यम लाभ हित हानि अधिक जेहि होय।
कहै न काहू सों प्रकट मन में राखै गोय॥
मन में राखै गोय कौन फल मिलि है यासों।
एक वित्त की हानि अवर सुनिहँसिहैं तासों॥
तासों सहो सँभारि भार सिर जो विधि दीन्हें।
बाँटि न लैहैं कोपकालयनी कोटिन कीन्हें॥ ५७॥
कीजै बाद बिवाद मति जग में इतने साथ।
कोविद, कवि, तापस, जती गुरु, मन्त्री नरनाथ॥
गुरु मन्त्री नरनाथ कहै जो अविहत बानी।
प्रति उत्तर के दिये होय हित आदर हानी॥

हानि हेत हित नहीं मौनता सिख सिख लीजे।
बड़े नरन की बात बरनि जनि दूखन दीजे॥ ५८॥

दोहा।

खाय खवावे देय कछु लेय कछुक लहि रीति।
गोप बात पूछे कहै खट लच्छन है प्रीति॥ ५९॥
ऐगुन निरखि निरादरे गुन करि करै बखान।
यह बातें आगी कहै जो हैं मित्र सयान॥ ६०॥
निज दुख जाने तिल सरिस प्रिय दुख मेरु समान।
प्रीति रेख पाहन लिखे निवहै नेह सयान॥ ६१॥
दुख देखे दुख होत है सुख देखे सुख होय।
खाय खवावे दे इलै प्रेमी मध्यम सोय॥ ६२॥
देत सिखापन रिसिकरै भरो कुटिलता अङ्ग।
दुखित देखि बातन करै अधम मित्र परसङ्ग॥ ६३॥
विद्यावान बराबरी नहिं करि सकै नरेस।
गुन को आदर ठौर सब राजा को निज देस॥ ६४॥
विद्या पढ़िवो निज धरम वित समान करि दान।
बुद्धिमान निज प्रति करै जौलगि तनमे प्रान॥ ६५॥
करनधार बर बुद्धि नर विद्याबोहित पाय।
सनोमान मुकुता लहैं सभा सिन्धु में जाय। ६६॥
कीजै दान विधान जग दीजै वित्त समान।
कछु स्वारथ नहिं कामना देइ दीन को दान॥ ६७॥

दान समै मन मोद कर बिलम न कीजै कोय ।
प्रगट न कीजै काहु सों राखो सब तें गोय ॥ ६८ ॥
देत दान हर लोक हित जे हैं पुरुष सयान ।
जहाँ जाय के धन रहै मन तहँ रहै लुभान ॥ ६९ ॥
निज सेवा हित स्वारथहिँ दानो दानहिँ देत ।
नहिँ पावै फल पुन्य को अधम दान कर देत ॥ ७० ॥
नीच साथ बुधि नीच है सम सो रहै समान ।
बाढ़े संगति बड़न की सुरसिर सुमन समान ॥ ७१ ॥
बिन स्वारथ दुख दीन लहि करि करुना हरि लेत ।
दीनबन्धु हरि याव दिल करि दाया सुख देत ॥ ७२ ॥

कवित्त ।

हरि लेत आरत को बिना कछु स्वारथ के तृन के समान धन धाम को गना करें । नीके प्रतिपाले पेखि वेद औ पुरान बानी अविचल बात ब्रजबोलि वो सदा करें ॥ बैरीवर रन लरि बेको चित चढ़े चाव मानि मन मोद मंजु धीरता धरा करें । दाया दान धरम कृपान पान गहतेही तन मन धन अरपनही करा करें ॥ ७३ ॥

सानन करत सुख मानै आए मंगन के सुचितें रहत देखि जाके यहवाने हैं । सो है सुर भाव मन दीन को बिलोकि हार सब देन कहैं बोलि साम बात आने है ॥ सुर गति लहत सहत पर मोद हैन देवे में सुलभ धन मन अनु-

मानै है । गोकुल सकार आदि दानी के सुभाव सो है लीजिये दकार तौ बखील के बखानै हैं ॥ ७४ ॥

दान न करत दुख मानै आए मंगन के दुचित रहत अति जाके यह्रवानै हैं । द्रोह दुर भाव मन दीन को विलोकि द्वार सबरै न कहै दोम बात बोलि आनै हैं ॥ दुरगति लहत दरत परमोद हेत देवै मैं दुल्भ धन मन अनुमानै हैं । गोकुल दकार आदि सूम को सुभाव सोहै लीजिये सकार तौ उदारके बखानै हैं ॥ ७५ ॥

सुपथ सुनीति चलै सुजस बसात जग सुबुध के संगति सदाई सुख मानै हैं । सुमति सुरीति प्रीति सुरुचि सुबोल बोलैं सुलह करत सबही सों मोद ठानै हैं ॥ सुधरम रत सुकरम को करत नित बसत सुठौर सुरराज भाव मानै हैं । गोकुल सकार आदि कवित सुजन के हैं लीजिये ककार तौ कुजन के बखानै हैं । ७६ ॥

कुपथ कुनीति चलैं कुजस बसात जग कुबुध की संगति सदाई सुखमानै हैं । कुमति कुरीति प्रीति कुरुचि कुबोल बोलैं कलह करत सबही सों मोद ठानै हैं । कुधरम रत कुकरम को करत नित बसत कुठौर कुरराज भाव भानै हैं ॥ गोकुल ककार आदि कवित कुजन के हैं लीजिये सकार तौ सुजन के बखानै है ॥ ७७ ॥

दोहा ।

हानि होय कछु आपनो मति कह काहू सोय ।
हित विलखै हरखै अहित दुहूंभाँति दुख होय ॥ ७८ ॥

कवित्त ।

पावन परम गति भूखन को रति की है सवरन रूप निज हेरते रहत है । भाव तन मन करै रतिदानी के प्रसंग अरथ के हेत बहु कोस को गहत है । छन्द परबध के प्रकास को बढ़ावै निज चित प्रति मति रुचि देन को चहत है ॥ सूमको सुभाव की है कविको ॥भाव को है बारनारि भाव ब्रज कोविद कहत है ॥ ७९ ॥

मूर्ख दोहा ।

करै बड़ाई आपनो पण्डित सभा मझार ।
ताको कोविद सकल मिलि मूरख लेत विचार ॥ ८० ॥
बिन समुझे पर बात के झूठहि साँची मान ।
करै काज मूरख वहै कह नव तोत सुजान ॥ ८१ ॥
रिन कर घर जेवर लहे व्याजहि में बिक जाय ।
देनदार दरसन किये हिये महा सरमाय ॥ ८२ ॥
कन्या थोरी उमर की बूढ़े नर को व्याह ।
दोऊ पछतावत रहैं इत दुलहिन उत नाह ॥ ८५ ॥
दुष्ट सत्रु सामर्थ सो रहे न जो हुसियार ।
तौ पल छिन लाघव लहै सो मूरख निरधार ॥ ८४ ॥
दे उधार धन आपनो पीछे करै करार ।
कहा तासुको उबरिबो सो डूब्यो मझधार ॥ ८५ ॥
बिन समझे पद अर्थ के गहे आपनो टेक ।
बाद करै गुरु तें पढ़त सो मूरख अवसेक ॥ ८६ ॥

बिन अवसर की बात कहि मन में महा लजाय।
ज्यों ऊसर की भूमि को बोज अकारथ जाय॥
होय प्रसङ्ग जु बात को करै कंठ अवरोध।
ताहू को मूरख कहैं कविकुल मारग सोध॥ ८८॥
करै लाभ के वखत में जो झगरे की बात।
जैसे बिल्लो न्याव दै बानर मन पछतात॥ ८९॥
क्रोध करै भोजन समै तजि षटरस को सार।
जैसे पछतावत रहै कलहंतरिता नार॥ ९०॥
संचित धन दै पुत्र को पराधीन जो होय।
ताको बूढ़े बैल सम बात न पूछै कोय॥ ९१॥
मात पिता गुरु नेह तजि तिय के हाथ बिकाय।
फिरत कलन्दर हाथ ज्यों बन्दर घर घर जाय॥ ९२॥
करत बात सहजै कछू बोलत बात विचित्र।
ताहू को नवनीत कह जानो मूरख मित्र॥ ९३॥
जाचक तें कीरति श्रवनकरिहरखै मन माहिं।
जानि लेहु जिय आपने सोऊ चातुर नाहिं॥ ९४॥
अहंकार राखै महा अपनी बुद्धि मझार।
सुनै न काहू को बचन सो मूरख सरदार॥ ९५॥
दारिद्रो कुलवान ह्वै करै न लघु उद्योग।
निसि बासर भूखन मरै ग्रसित लाज के रोग॥ ९६॥
कपटी कृतघन मित्र पै करि के कछु उपकार।
बदलो चाहै तासु कों सो मूरख निरधार॥ ९७॥

देह निरोगो पाय के राखे औषध नेह ।
सो अति मूरख जानिये मरत रोग सन्देह ॥ ९८ ॥
कुटिल कारवारी जहाँ मालिक निरभय होय ।
ज्यों तरवर संगर लगी कबहुँ न प्रफुलित होय ॥ ९९ ॥
लाभ समै आलस करे धरे नजिय उतसाह ।
निसि दिन सालत सूल सम हियों हानि को दाह ॥१००
जे जन खल उपदेस तें करें काज चित लाय ।
ताहू को मूरख कहैं जे जन पण्डितराय ॥ १०१ ॥
सबल होय निर्बलन सों क्रोध करै मन मान ।
ताको मूरख कहत हैं जे जन चतुर सुजान ॥ १०२ ॥
बैठ अथाई आपनी खोटे यारन बीच ।
निन्दा करे बड़ेन को सोऊ मूरख नीच ॥
आवत हीं सुख के दिना दुख को देइ विसार ।
अहंकार राखे मने दिनाचार में ख्वार ॥ १०४ ॥
लघु रच्छा के कारने खरच करै बहु जोय ।
बिन विचार मन में किये मूरख कहिये सोय ॥ १०५ ॥
बिना काज डोल्यो करैं बिन औसर जे लोग ।
तिन हूं में कछु जानिये मूरख को संजोग ॥ १०६ ॥
बढ्यो बैर बलवान सों रहै आप घर सोय ।
करै न तासु विचार जिय ऐसो मूरख कोय ॥ १०७ ॥
वृथा मर्म भेदन करै गुह्य प्रगट करि जोय ।
पूरन मूरख कहत हैं ताहू को सब कोय ॥ १०८ ॥

साझे के व्योहार को लिखे न रोज सुधार।
सोऊ मूरख जानिये होय अन्त तकरार ॥ १०९ ॥
बात करे जहँ जुगल नर तिन समीप चलि जाय।
खेद होय उनके मनै वह मूरख पछताय ॥ ११० ॥
करै बात हित को कछू कोऊ अपनो जान।
जाहो सो ऋषि करि उठे मूरख ताहि बखान ॥१११॥
सब जन के मन एक से राखे हिय विश्वास।
सोऊ मूरख जानिये कब हूं होय निरास ॥ ११२ ॥
करि कुकर्म निर्लज्ज ह्वै बोले सुथरे वैन।
ता मूरख को जानिये या जग आयो है न ॥ ११३ ॥
बात बात के बीच में नाहक हँसे गँवार।
होय न मन लज्जित बहुरि सो मूरख निरधार॥ ११४
गई बात को सोच कर दुखित होय पछताय।
नाहक मन मैलो करै बहुरि न कछु मिलि जाय ॥११५
करै नौकरी ससुर को राखै मन अभिमान।
ताहको कोविद सकल मूरख लेत पिछान ॥ ११६ ॥
मूरख में मूरख वहै जो मूरख को मीत।
मूरख अनुगामी बहुरि सो मूरख रनजीत ॥ ११७ ॥

घाघ।

ना अति बरखा ना अति धूप।
ना अति बकता ना अति चूप ॥

लरिका ठाकुर बूढ़ दिवान।
ममिला बिगरै साँझ बिहान॥ ११८॥

कुण्डलिया।

जनमे बाम्हनकुल बिखे अच्छर सों नहिं भेंट।
जप-सन्ध्या जानै नहीं केवल पालत पेट॥
केवल पालत पेट काम पूजा को करतो।
कुटनिन सों करि नेह नीच नारिन मन हरतो॥
निस दिन करत कुकर्म संकनहिं आनै मन में।
रहत सदा परतच्छ दच्छ निज कुपदी जन में॥ ११९॥

घर में बोलत सिंह सम बाहर होत सियार।
ठाकुर की पूजा समै रूप लखात हुंड़ार॥
रूप लखात हुँड़ार मानुषी तन रस चाखै।
सब तें करै बिसास घात अति झूठो भाखै॥
बिना सूत को पूत ताहि ठेलै मन्दर में।
अति असंक ह्वै आप फिरै नीचन घर घर में॥ १२०॥

बेटा जब जावै नहीं मन्दिर पूजन हेत।
बिना जनेऊ के नहीं सेवा करै सचेत॥
सेवा करै सचेत सुनत जरि उठे रिसानू।
पीटन लागे पूत आप जिमि जरत कृसानू॥
जब पावत है ज्वाव ताव बिन के सिर हेटा।
घर तजि मन्दिर जाय कहत मूरख यह बेटा॥ ६२१॥

बलहारी वहि भूमि की जामि ऐसे लोग ।
कर्म धर्म छल पुच जुत चाभत ठाकुर भोग ॥
चाभत ठाकुरभोग विप्र को केवल नामा ।
सकल सुद्र की चाल रहे ओढ़े रमनामा ॥
धन्य राम को काम न होवे गति जरि छारो ।
भसमासुर सो निरखि रामहु ने बलहारी ॥ १२२ ॥
बेटा जब उत्तर दियो जरि मरि उठ्यो रिसाय ।
मारन वहु लाग्यो तुरत क्रोध न हृदय समाय ॥
क्रोध न हृदय समाय आप तें आप जरत है ।
विन कारन रिसिआय सहज दुख पाय मरत है ॥
अधमो जन सग फिरै बांधि अपजस को फेटा ।
दुसमन के घर रहत पेट लगि निसि दिन बेटा ॥१२३॥

सवैया ।

ठाकुर पूजन दर्शन को बनिता जब जात जवान औ वारी । ताके लिये बहु कूटनो छोरत औ पुनि दौरत नांघि पगारो ॥ एकन तें करै वोलो ठठोली गहै कर एकन लैकै अँधारी । हाय दई कबलौं तुम राखि हो ऐसो महा अधमो को पुजारी ॥ १२४ ॥

अच्छर सों नहीं भेंट कहूं फिरै खच्चर सो सदा देह दिखातो । कच्चर कूट को भाखत बात यही दिन रात है और सिखातो ॥ बाम्हन बंस कुठार भयो परनारिन में निसि द्योस वितातो । पेट पचैवे में आतुर चातुर राम पुजारो में नाम लिखातो ॥ १२५ ॥

बात बकै बहु लोगन तें मुसुकात फिरै सब सों सब ठौरे। ठाकुर सेवा प्रसिद्ध करै पलखात ज्यों गिद्ध मरीन पै दौरे ॥ मूरखमण्डली में बनै पण्डित पण्डित माहँ चुपात है छौरे। कौन पुजारी बनायो यहै अति देह नपाक तियान को टौरे ॥ १२६ ॥

छैल बनो सदा गैलन में फिरै जैलन में सोहदान को घाटो। बाहिर नीच कहारिनी राखत मन्दिर जाय डोलावत घाटो ॥ नाहक याहि पुजारी बकैं सब हाथ लै डालै कलङ्क को काटो । आचरजै यह साटो न खात है क्यौं नहिं जात है काटन माटी ॥ १२७ ॥

औरन को धन खैबो सदा दुख दैबो महाजन को गुनि-राखो। झूठ बतैबे में संक नहीं जजमान सुता को सबै रस चाखो ॥ ऐसो पुजारी को राखत है कोउ लागत है मनो दूध को माखो। झांखो दिखैबे बहानें तिया हरै ठाकुर को सदा दै कर साखो ॥ १२८ ॥

कवित्त ।

करतै न आदर बड़े को बात मानि कछू भरतै न सादर अभागत चबैनो है । डरतै न पापिन के संग तें प्रसङ्ग करैं धरतै न साधु सङ्ग जामे सुख चैनो है ॥ मरतै रहत लाभ औरन को देखि सदा हरत अती मन के जीवन तनैनो है । घरतें न कढ़े कवि आए सुनै द्वार ऐसे पाजिन के मुख में पेसाब कर देनो है ॥ १२९ ॥

सवैया।

पूरी कची अति रूरो सनेह सो आम फफूंदे परोसे सरासर। चाम से पापर भाजौ कचाकचा ज्यान गयो करनोन छराछर॥ मंचित लोटो लटा सो लटा गुरु व्याह को कोनो उमंग भराभर। दूध टका को कका परसा लै छका छको बीस जने को टका भर॥ १३०॥

कवित्त।

घेरि घेरि आवत सघन घन प्रलै कैसे उठत बलू लायु अति उतपत्ते में। गिद्ध मँडरात चीलहैं चहुँ घा चिचात फिरें जम्बुक जमात को गनाऊ कहा गत्ते में॥ कूकै कोपिकान्नो लिये खप्पर सुखान्नो फिरै जोगिनी निरालो लै भुजालो अन्न गत्ते में। टूटे नभतार आयो कंपिनो कुतार गिरै तड़कि कै तड़िता कड़ाक * * * * *॥ १३१॥

बैठिवेको ऊठवेको वोलवेको चालवे को जानत न एको चाल आए जगढाचे मे। देखिवे में मानुखको आकृति दखाई परे पसुको सुभाव औपरिन्द पस्यो जाचे में॥ ग्वाल कवि कहतविरंचि तुच्छ जन्तुन को काढ़ि प्रान डारे लगी ख्यालन के खाचे में। कूकर तें सूकर तें गर्दभ तें उल्लुन तें काढ़ि काढ़ि जीव डारे मानुख के सांचे में॥ १३२॥

कुण्डलिया।

उत्तम अमला करत नहिं रोसवंत ऊपर ख्याल।
सम्बूकादिक नहिं तकत ज्यों मराल को बाल॥

ज्यों मराल को बाल छीर अरु नीर निवारै ।
कुपद सुपद मामिला जथारथ लखि निरधारै ॥
करते प्रभु को काज धरम को धरि सिर समला ।
रिसवत ऊपर ख्याल करत नहिं उत्तम अमला ॥१३३

अमला आँख देखावहीं जबलों मिलै न घूस ।
रूसवत पाए भीतरै काम करें ज्यों मूस ॥
काम करैं ज्यों मूस हाल कोई नहिं जाने ।
लिखें और इजहार असामी और बखाने ॥
कपटी बकुला बरन बांधि के बैठे समला ।
परधन हरन प्रवीन बड़े अपकारी अमला ॥ १३४ ॥

सवैया ।

जबलों न बुराई करैं पर की तबलों मन में अति दीन रहै । हित और को जो सपने हूं लखैं निज हानि समान मलीन रहैं ॥ जिमि ही जिमि उन्नति काहु की होति मिही तिहि रोजहिं छीन रहैं । पर हानि में पाजी प्रबीन बड़े चुगुली में सदा लवलीन रहैं ॥ १३५ ॥

खूब खराबी खराद चढ़्यो मुनिकाई के मेल तें बाहिर है । छोटो लग्यो उपकार को ना गुन हानि जहान में जाहिर है ॥ लाख में एक शिकायत शोभ में ओप अनीति की माहिरहै । काहिर या चुगुली के खदान को जौहर वारो जवाहिर है ॥ १३६ ॥

आलसी—ग़ज़ल ।

दुनियां में हाथ पैर हिलाना नहीं अच्छा ।
मर जाना पर उठ के कहीं जाना नहीं अच्छा ॥
छेड़ो न नक्शे पा है मिटाना नहीं अच्छा ॥
बन्दर की तरह धूम मचाना नहीं अच्छा ।
उठ कर के घर से कौन चले यार के दर तक ।
मौत अच्छी है पर दिल का लगाना नहीं अच्छा ॥
धोती भी पहने जब कि कोई और पिन्हा दे ।
उमरा को हाथ पैर चलाना नहीं अच्छा ॥
सर भारी चीज है इसे तकलीफ हो तो हो ।
पर जीभ बिचारी को सताना नहीं अच्छा ॥
फ़ाक़ों से मरिये पर न कोई काम कीजिये ।
दुनियां नहीं अच्छी है ज़माना नहीं अच्छा ॥
सिजदे से गर बहिश्त मिले दूर कीजिये ।
दोज़ख़ही सही सर का झुकाना नहीं अच्छा ॥
मिल जाय हिन्द ख़ाक में हम काहिलों को क्या ।
ऐ मीरे फर्श रंज उठाना नहीं अच्छा ॥

नीति उपदेश पूर्ण सामयिक ।

दोहा ।

इक आसन पै मुदित ह्वै बैठत संत अनेक ।
पै न दोय नृप कैसहूं रहैं देस में एक ॥ १२७ ॥

वाल पती वाला पती अवर नृपति गन तुच्छ।
तुलसी इने न सेइये यदपि होय दुर भिच्छ॥ १३८॥
तियपति बहुपति बालपति बिन नरेस को देस।
तुलसी संपति को कहै पति को बड़ो अनेस॥ १३९॥
अन-उपकारी पुरुष तें तिनुकाहू बरु नीक।
पसु पालत दंतन गहे पालन भीर अनीक॥ १४०॥
माता सी रच्छा करति हित पितु तिय सी प्रीति।
धन कीरति विद्या करति कलपलता की रीति॥ १४१
जिहि लगि सहत अनेक दुख पै भोगत तिहि नांहिं।
अंत काल औरै लहत धिक ऐसे धन माहिं॥ १४२॥
ससिहि संभुसिर पै धरत राखत अधिक सनेह।
सिव कवि पर-घर वास तें तजु दूबरी देह॥ १४३॥
तियमुख सुखमा लखि जियत तजि उद्यम दिन राति।
तिन कहँ त्यागि दरिद्रता कबहुं दूरि नहि जाति॥१४४
अमल समल करि गुन दहति आसु नेह को नास।
खलमति मेरे जान में दीप सिखा सी खास॥ १४५॥
मारुत मतवारे प्रवल गति पैहै तू कौन।
चातक मुख जो जल परत करत निवारन तौन॥१४६
तुम चातक आधार हो को जग जानत नाहिं।
तोयद क्यों अरसा करत सरसा वरसा माहिं॥ १४७॥
जदपि निसाचर चन्द्रमा दीन छीन सकलंक।
तदपि चकोर किसोर कहँ दायक सुख निरसंक॥ १४८

करस्फोट अंबर तजत तेज हानि जुत राग।
होत वारुनी संग तें सूरज हू बड़ भाग॥ १४९॥
नीर छोर बिवरन समय जो मराल अलसाय।
तौ शिव कवि या जगत में को करि सकै उपाय॥१५०
कोकिल तेरी छवि जथा तरु रसाल पै होति।
खदिर करीर पलास पै तस नहिं फैलति जोति॥ १५१
नवनि नृपति में होय जब तबहिं प्रसंसा जोग।
दीन लोग तो वैसही रहैं नम्रजुत सोग॥ १५२॥
गम समान भोजन नहीं जो कोउ गम को खाय।
अम्बरीख गम खाइयाँ दुरवासा बिललाय॥ १५३॥
पुरुष नहीं बलवान है समय बड़ो बलवान।
अर्जुन आछत गोपियन लूटि लई कावान॥ १५४॥
तुलसी बुरो न मानिये जो गँवार कहि जाय।
जैसे घर को नरदवा भलो बुरो वहि जाय॥ १५५॥
तुलसी लोहा नाव में फिरो फिरै जल माहँ।
बड़ें न बूड़न देत हैं जाको पकरी बाहँ॥
तुलसी संग लवार को जौ करिये सौवार।
भेड़ पूंछ भादों नदी को गहि उतरै पार॥ १५७॥
खेतीवारी वीनती औ घोड़े को तंग।
अपने हाथ सँवारिये लाख होय कोउ संग॥ १५८॥
सवैया।
लाख दियो हरनाथ को राम है लाख दियो रजामान

अमाने । छत्तिस लाख दियो कवि गङ्ग को जोके उमङ्ग तें त्यों खानखाने ॥ केशव को दियो ब्रह्म छ कोटि नगारो सबै हरनाथ सुजाने ॥ साह अकब्बर त्यों नर नाहर भूखन को सनमान सिवाने * ॥ १५९ ॥

साखन में रहैं काक उलूक सुभाव ससैत करैं सब वन्दन । लागी प्लवंगम संग रहैं नित तीक्ष्णनिवारत है दुख दन्दन ॥ पन्नग पुंज मधुव्रत आवृति प्रावृति है तऊ ताप निकन्दन । कोटिन कूर रहैं ढिग में जऊ सीतलता न तजै तऊ चन्दन ॥१६०

कवित्त ।

जाचक तिहारे हम चातक चतुर चित गायक हमेस गुननित चित चेरे को । स्यो कवि कहत स्यामसुन्दर साहावन ह्वै दरसन हेत देत कौन कान फेरे को। बातें ना बनैगी पछताते तू रहैगोयार समय विताते तें कलंक उर तेरे को । जलद तिहारो जल जलद बिहाई पैहै जलद कहाय जो न देत जल मेरे को ॥ ६११ ॥

---

* राजारामसिंह बाँधवगढ़ ने एक लाख और राजामान सिंह कछवाहे आमेर ने दो लाख रु० हरनाथ कवि को, रहीम खानखाना ने छत्तिस लाख रु० गङ्ग कवि को, राजा वीरवर ने छकरोड़ दामको हुण्डियां केशवदास को, बाँधवगढ़ और आमेर से पाए तीनो लाख रु० हरनाथ कविने नगारों को, बादशाह अकबर ने नरहरि कवि को तथा छत्रपति शिवाजी ने भूषण कवि को जो दान मान दिया वह संसार में प्रसिद्ध है।

सवैया।

कंज से पायन पानि पयोज से रंभा सची रति रूप ललामैं। कंचन से कुच कुंभन ऊपर भूलि अमोमति अंग प्रभामै॥ वेनी नहीं मृगनैनी के नैनन सैनी लगो जमराज के धामै। ऐचित चूतिया चौकनो देखि चुभौ जनि चंद मुखी न के चामै॥ १६२॥

ज्ञान घटे ठग चोर की संगति मान घटे पर गेह के जाए। पाप घटे कछु पुन्य किये अरु रोग घटे कछु औषध खाए॥ प्रीति घटे कछु मागन तें अरु नीर घटे रितु ग्रीषम आए। नारिप्रसंग तें जोर घटे जमत्रास घटे हरि के गुन गाए॥ १६३॥

निज बाहन तें अरि वीरन के सिर काटि न मैं दिग देवन दै। अति दीन लखि न दया उर मैं बिन स्वारथ आरत ना हरि मैं॥ "ब्रज" चन्दन पंक मयंक मुखो तन मंडित मै न किये रस लै। नर नाहक जन्म लियो जगमै परमारथ स्वारथ एक न कै॥ १६४॥

यह काज भये अब को करि हैं कछु स्वारथ ऊ परमारथ है। वह काज भये तुरितै लगि गो कछु झंझट काज जथारथ है॥ तिहिमै परिकै अरुझै न भयो कछु स्वारथ ह्व परमारथ है। इमि हाय विचार विचारहि मैं शुभ औसर जात अकारथ है॥ १६५॥

छप्पय।

कहा राम कह लखन कहा रहिया रामायण।
कहा कृष्ण बलदेव प्रगट भागौत पुरायण॥
वालमीक शुक्र व्यास कथा कवितान करंता।
कुंण सरूप सेवता ध्यान मन कौन धरंता॥
जग अमर नाम चाहो जिके सुनो सजीवन अक्खराँ।
राजसी कहे जग राण सौं पूजो पाय कवीस्वराँ*॥१६६
मंडोवर सा ंत हुवो अजमेर सिद्ध सुव।
गढ़ पूगल गजमल्ल हुवोलोद्रवै आँड़ भुव॥
अल्ह पल्ह अरबद्द भोज राजा जालंधर।
जोंगराज धर धाट हुवो हांसू पारक्कर॥
नव कोट किराड़ू संजुगत थिर पँवार हरथप्पिया।
धरनी बराह धर भाइयां कोट बाँट जूजू किया॥१६७
सुरसमूह को सुधा विस्नु को रमा मनोहर।
संकर को ससिकला सक्र को कल्पतरोवर॥
मेदिनि को मरजाद हिमाचल सुत को सरनो।
रविससि तेज पिआष करत नहिं दुख उद्धरनो॥

* इस छप्पय को हिन्दूपति महाराणा राजसिंह ने मेवार देशान्तर्गत निज रचित राज समुद्र सरोवर तटस्थ राज सदन पाषाण चतुर्खंट सौध्य में नामाङ्कित किया है।

बारिधि अगस्त अचयो जबै किनहु न करो सहाय भल।
एकहि दईव कोपत जबै होत सकल साधनविफल॥१६८

कवित्त।

आए हो सरन जान मान कमधेश मोको मानत हों धन्य धन्य ऐसो अवसर मैं। लोक बीच याही काज बाजत हैं कनो हम यातें अब सफल करौंगो भुजवर मैं॥ नागपुर नाथ जिन आप को अनाथ जान मान के विसास कर दौनो सिर घर मैं। राखिहौं सजल यों सुरेस सों बचाय कर राख्यो हिमगिरि पुत्र सिन्धु ज्यों उदर मैं * ॥ १६९ ॥

मागन गयो है भाट भूपति भदावर पै आयो घने घोरे लै उठ्यो पुकारि पौरिया। भिच्छुक की भामिनी सदन मैं बदन खोलि झांकति झरोखे झानो पट दै पिछौरिया॥ इत गुरुजनलाज उत न डगत धाम प्रानपति मिलवे की लागी चित डोरिया। जोपै रथ रावरे के सिथिल भए हैं अस्व रवि सों कहति माग मंगन भदौरिया॥ १७० ॥

पेट को निपट शुद्ध आँखन लजोली वीर उर को गँभोर होय मोठो महासुख को। बांहं को पगार पुनि पाय को अडग होय बोलन को साचो देवो दास सूधोरुख को॥ मन को उदार ढोल हाथ को अकेलो एक काछहो को

* नागपुरदेशाधिपति मधुराजदेव के शरनागत समय यह प्रतिज्ञा मरु देशाधिपति कमधजमहाराजमानसिंहकी है।

काठो है सहैया सुख दुख को । पच्छ के पितामह ने ऐसा जो संवाखो तब यातें कछु औरह्न सिंगार है पुरुष को ॥ १७१ ॥

सुन्दर सरीर होय महारनधीर होय वीर होय भीम सों भिराक आठो जाम को । गरुवो गुमान होय भलो सावधान होय सान होय साहिवो प्रताप पुंजधाम को ॥ भनत असान जो पै मघवा महीप होय दीप होय वंश को जनैया सुख खाम को । सर्व गुनज्ञाता होय जद्यपि विधाता होय दाता जो न होय तो हमारे कौन काम को ॥१७२॥

हंसन को दल है कि घनसारथलहै कि इन्दु को उपल है कि कासमीर देस को । सरद को घन है कि संतन को मन है कि पुण्डरीक बन है कि वाहन सुरेस को ।: हिम को अचल है कि गंगाजू को जलहै कि बांको दास * कैधौं फन

* आप को श्री बैकुण्ठवासी महाराजा मानसिंह बहादुर योधपुर नरेश ने लच्च रु० दिया था । आपही के पौत्र कविराजा मुरारिदान वर्तमान हैं जिनको श्री बैकुण्ठवासी महाराजा यशवंतसिंह बहादुर (२) जी० सी० एस० आई (योधपुर गद्दी का सैतीसवाँ राजा) ने सम्वत १९२९ में लच्च रु० तथा वर्तमान महाराजा सरदारसिंह बहादुर ने "यशवन्त यशोभूषण" ग्रन्थ के पारितोषिक में सम्वत १९५४ में लच्च रु० दिया है ।

मण्डल है सेस को ॥ सिव को सरीर है कि सारदा को चोर है कि बनमाली चीर है कि जस बखतेस * को ॥१७३

करन के विक्रम के भोज के प्रबन्ध सुनो कैसो भांति कविन को आगे लीजियतु है । कवि मतिराम राज सभा के सिंगार हम जाके बैन सुनत पियूष पीजियतु है ॥ एक के गुनाह नरनाह श्री उद्दोत चन्द कविन पै एतो कहा रोस कीजियतु है । काहू मतवारो एक अंकुस न मान्यो तो दुरद दरबारन तें दूर कीजियतु है ॥ १७४ ॥

तारे मंद फैले मारतण्ड को अरुन तेज तम गिरि गुहा गैलें जात दिसा दस को । पंकज विकास पावें गायक वि-आस गावें रिषिसरसावें महावेद धुनि रस को ॥ जागे जग गज मद गंध अनुरागी भौंर त्यागी कोक मण्डली वियोग रैन बस को । बांको दास कहै बखतेस माधवेस नन्द जाही वेर कीजिये उचार तेरे जस को ॥ १७५ ॥

विद्या भूमि मे न अर्थ बीज होते अंकुरित छत्र धर्म दा-दुर दुराक्रत दरसतो । मेधावी मयूरन को मोद मिटि जातो सूरवीरन को मान मीन पंकहि परसतो ॥ अतुल उदार बलवन्त रतलाम राजा चातक चतुर मन तापन तरसतो ।

* महाराजा बखतसिंह (योधपुर गद्दी का बत्तीसवां राजा)

बाड़व दरिद्र कवि सागर सुखावतो जो मालवेन्द्र * तू न मास बारह बरसतो ॥ १७६ ॥

छप्पय ।

ज्याँ हाथाँ भाँजिया आठ सोवा पतसाही । ज्याँ हाथाँ साझिया साख साखवाँ सिपाही । ज्याँ हाथाँ वहलोल भी-मसिरखा खल भंजे । ज्याँ हाथाँ जूजुवा गाढ़ गढ़पतियाँ गंजे । ज्याँ हथाँ मेंघमाला सहित पुष्पदन्त बगशा वियो । त्याँ हथाँ छत राजागजन पाताँ आशव पा वियो † ॥१७७॥

सवैया ।

केलि समै निसि नारिन हार के टूटि परै मुकुता गन भारिये । प्रात वहारन अंगन अंघ्रि के रंग सो लालिमा को वह धारिये ॥ जानि कै दाड़िम वीज सुचंचुन चोंथत हैं ग्टह के सुक सारिये । भौनन भीतर भिच्छुक कै नृप भोज (२) कै दान को लोला निहारिये ॥ १७८ ॥

दान तुरङ्गमदीजत है मृग खंजन ज्यों चलता न तजै पल । दोजत सिन्धुर सिंघल दीप के पीवर कुम्भ भरे मुकुता

* महाराजा रतलाम ने इस कवित्त पर कवि राजा सूर्य्यमल्ल जो को आग्रह पूर्वक लक्ष रु० दिया था ।

† राजा गजन=योधपुर का (ओन्तीसवाँ राजा) महाराजा गजसिंहतलवारवहादुर । यह महाराज मुगलसम्राट जहांगीर बादशाह के समय में थे। ५२ लड़ाईजोते थे। (२) महाराव राजा भोज बूंदी, मोसाह वादशाह अकबर (वंशभास्कर)

फल । ग्राम अनेक जवाहिर पुंज निरन्तर दोजतु भोज किधौं नल ॥ मानमहीपति के मन आगी लगी लघु कांकर सोकन-काचल ॥ १७९ ॥

खारी कियो है पयोनिधि को पय कारो कियो पिक सो अनुमानो । कंटक पेड़ गुलाब कियो अरु चातक बारह मास तिसानो । पंक को अंक कियो है मयंक में आग कियो है चकोर को खानो । सागर मोत सवै परिखाकर हंसपती हर वाहन जानो ॥ १८० ॥

अङ्ग अनङ्ग तहीं कुच संभु सुकेहरि लंक गयन्दहि घेरे। भौंहंकमान तहीं मृग लोचन खंजन क्यों न चुगै तिल नेरे ॥ है कचराहु तहो उदै इन्दु सुकीर के विम्बन चोंचन मेरे । कोऊन काहू सों रोस करै सुडरै डर साह अकव्बर तेरे * ॥ १८१

पानी को जल्लू कहा पहचानत ग्रोषम को तप की गरदी को । केसर को करिहै कहा कीमत है न परीख जहां हरदी को ॥ कायर को न कछू परिचै कलसूरन के मरदा मरदी को । वेदरदी न प्रवीन लखै कछू जानत हैं दरदो दरदो को † ॥ १८२ ॥

---

* यह सवैया ओड़छावाले प्रबोध राय पातुर की है जो उसने अकबर बादशाह के पास दिल्ली में हाजिर होकर पढ़ी थी । † यह सवैया राजकुमार सज्जिरावज जी राजकोट कृतप्रवीन सागर ग्रन्थ की है जो विशाल ग्रन्थ दर्शनीय है।

जाको हमेस चली हुकुमै छिन मण्डल बीच अड़ी नहीं आड़ो। साहिबो सम्पति कौन गिनै मनि मानिक मोहर की निधि गाड़ो ॥ भाखे प्रधान पयान समै वह सम्पति साज चले नर छाड़ो। चानो के बासन गाड़े रहै मरि पीपर टांगि छदाम को हांड़ो ॥ १८३ ॥

ब्राह्मण कोपि पताल पठै बलि ब्राह्मन सात हजार को जारो। ब्राह्मन सोखि समुद्र लियो अरु ब्राह्मन छत्रिन को मद झारो ॥ ब्राह्मन लात दियो हरि के उर ब्राह्मन ने जदु बंस उजारो। ब्राह्मन सो मति बैर करो कवौं ब्राह्मन सो परमेश्वर हारो ॥ १८४ ॥ दोहा।

पांखें इन संसार को जो देतो जगदीस।
बीज न रहतो वापुरी चिरियन को भुवि सीस ॥१८५॥
तुला कोटि इन खलन को अहै इत्ति विख्यात।
थोरेही उन्नति लहत थोरेहो अध जात ॥ १८६ ॥
सालंकार सुवर्न जुत रसनिर्भर गुन लीन।
भाव-निबंधित जयति जग कवि भारती नवीन ॥१८७॥
दलत द्विरद रन खग्ग सों लख उजैन जसवन्त *।
अद्रि विदारत बज्र सों हरि सुमिर्यो दिन कन्त ॥१८८

* योधपुर गद्दी के तीसवाँ राजा हैं, सम्बत् १७१५ में औरङ्गजेब के साथ उज्जैन में घोर युद्ध किये हैं। यह इतिहास मुनसिफ देवी प्रसाद योधपुर से मगाकर देखने योग्य है।

विद्या के अभ्यास बिन औसत जन बिन संग।
अरु इन्द्रिन के दमन बिन होत जु व्यसन प्रसंग ॥१८९॥
ह्वै न होय तो थिर नहीं थिर तो बिन फलवान।
सत पुरुषन को कोप है खल की प्रीति समान ॥ १९०
है संध्याह्न रागजुत दिवसहुँ सनमुख नित्त।
होत समागम तदपि नहिँ विधि की कला विचित्त॥१९१
जयो नृपति चालुक्य को नयो वंगपति कन्ध।
परगहि अठ सुलतान सथ किय अपूर्व जयचन्द ॥१९२॥
गिरि हरि लोटत जन्तु सों पूर्ण पतालहि कौन।
परगो गौरव सिन्धु को मुनि इक अंजुलि पौन ॥१९३॥
नरक होत है पाप सों पाप दरिद सों होय।
दरिद होत है दान बिन दान करहु सब कोय ॥१९४॥
षटपद सोभा देत हैं करी कपोल न लाग।
करत कर्न ताड़न तिन्हैं अहो महान्ध अभाग ॥१९५॥
अन सुखतें दुर वचन वह प्रय मुख तें परिहास।
इतरेन्धन जनस्यो धुवां अगुरुज धूप प्रकास ॥ १९६ ॥
यह जप्यो मन्दोदरी बरजत हुतौ सदीय।
आकरसत चन्दन लता पनग जगायो पीय ॥ १९७ ॥
मित्र भलो नहिं रिपु भलो खल जन यह जिय जान।
दुखदाई दोनो दशा काटत चाटत स्वान ॥ १९८ ॥
नहिं कहनो निज नाम को यह सिष्टन आचार।

भैसो भाख्यो तो करै निन्दा जगत अपार ॥ १९९ ॥
जैसे सँड़सी लोह की छिन पानी छिन आग।
तैसे सुखदुख जगत के तुलसी तू मत भाग ॥ २०० ॥
तुलसी जग में यों रहे ज्यों जिह्वा मुख माहिँ।
घोव घनो भोजन करै तौहू चिकनो नाहिँ ॥ २०१ ॥
नवन नवन बहु अन्तरा नवन नवन बहु बान।
ये तीनो बहुते नवैं चीता चोर कमान ॥ २०२ ॥
तरवर सरवर सन्त जन चौथे बरसे मेह।
परमारथ के कारने चारो धारे देह ॥ २०३ ॥
जब गुन को गाहक मिलै तब गुन लाख बिकाय।
जब गुन को गाहक नहीं कौड़ी बदले जाय ॥ २०४ ॥
आसन मारे क्या हुआ मरी न मन की आस।
जैसे तेली बैल को घरहीं कोस पचास ॥ २०५ ॥
रात गँवाई सोय के दिवस गँवायो खाय।
हीरा जनम अमोल जग कौड़ी बदले जाय ॥ २०६ ॥
देह धरे को गुन यही देह देह कछु देह।
देह खेह ह्वै जायगी कौन कहैगो देह ॥ २०७ ॥
खाय खवाय लुटाय लै करलै अपनो काम।
चलती विरियाँ रे धनी संग न चलै छदाम ॥ २०८ ॥
पारस में अरु सन्त में बड़ो अन्तरो जान।
वह लोहा कंचन करै वह पुनि आप समान ॥ २०९ ॥

जननी जने तो भक्त जन कै दाता कै सूर।
न तरक तू वस बांझ रह नाहक बिगरै नूर ॥ २१० ॥
जाको बिगरी आदि की बनै न खरचे दाम।
सोस गयो आकास लौं मिटो न वावन नाम ॥ २११ ॥
तन तलवाराँ तिलछियो तिल तिल ऊपर सीव।
आलां घाँवाँ ऊठसो मत कर साज नकीव *॥ २१२ ॥

सोरठा।

यह ईंदारो पाड़, कमधज कटै न पाँतरै।
चूँड़ो चँवरी चाड़, दियो मँड़ोवर दायजी ॥ २१३ ॥

दोहा।

विष दीन्ही जारे बहुरि लाखागृह के वीच।
हरे बसन पुनि द्रोपदी वह दुरयोधन नीच ॥ २१४ ॥
करतें कौड़ी कढ़त नहिं धरत न रन में धीर।
उदरभरन कहने परे तिन को दाता वीर ॥ २१५ ॥

* शत्रु दल की खबर सुनकर आवाज देता हुआ नकीब से (कंठ गत प्राण रहते युद्धकर्ता महाराणा प्रतापसिंह को) महल खवासिन का बचन है कि हे नकोव रणक्षेत्र से आए हुए महाराणा के अंग तलवारोंसे ऐसे तिलछागए हैं कि तिल तिल के ऊपर टांके पड़ते हैं। तेरी आवाज़ सुन कर इस आलेघाव पर भी युद्ध के लिये दौड़ पड़ेगी अतएव तू न बोल।

पाग भाग बाणो प्रकृति अच्छर उक्ति विवेक ।
इते न देखे एक से देखे मुलुक अनेक ॥ २१६ ॥

नौसांणो ।

दल घोड्या पतशाह दा पै दीठा थोड़ा ।
गजबन्धी जेहा जवाँ जे जेहा घोड़ा ॥ २१७ ॥

दोहा ।

रण चढ़ खानो भोज रज गया लड़ा फड़ लेह ।
राणा माहकमसिंह रै दूजे वूठा मेह ॥ २१८ ॥
दिन दिन प्रति प्रानी अनत जम के आलय जात ।
थिरता चाहत पाछिले यह अचरज की बात ॥ २१९ ॥
वर वांको दिन पाधरा मरदन मूकी माण ।
घणा नरिन्दाँ दौरियो रहे गिरिन्दाँ राँण ॥ २२० ॥
सिन्धु हुतो छौलन चल्यो गज थ्यो भी मदमत्त ।
थी मरुपति गजसिंह पुनि विरदायो अस पत्त ॥ २२१ ॥
नीति रीति खतवट निपुण किन्ति उपावण कज्ज ।
सुपह भलो सादूलसो किसनाणैं कमधज्ज ॥ २२२ ॥
तर लंवा अंवा गहर नदियां जल अप माण ।
कोयल दिये टहकणाँ ऐयो धर गोढ़ाण ॥ २२३ ॥
आवध कमना उमग सू विटर लगावे वार ।
नहीं लगावे तावता जेझ वड़ा जूझार ॥ २२४ ॥
कंथ कटारो अप्पणो उभा पगाँ मरेह ।
रुधिर झकोलो धर पड़े मन भावे सो लेह ॥ २२५ ॥

सोरठा ।

माल्हो ग्रीषम माय, पोष घँवीं द्रुम पालियो ।

जिणरी गुण किमि जाय, अत घँण बूठाँ ही आजा॥२२६

कूँ कूँ वरण कलाइयाँ चूड़ो रत्तड़ियांह ।

बोभा गलनि लगो नहीं वालूं वांहंड़ियांह ॥ २२७ ॥

सोरठा ।

इभ आयश्च मद अन्ध, घर सुर धर कब घूमिया ।

करहा तूझ कमन्ध, मिलिया दिगजाँ मूलसो ॥ २२८॥

दोहा ।

लूवाँ झड़ नदियाँ लहर, वझ पंकत भर वत्य ।

माराँ सोर ममोलियाँ साँवण लायो सत्य ॥ २२९ ॥

इति ।